चन्दामामा

सितम्बर १९७५

Photo by : S. S. GHATAGE

SUN-FLOWER

राम और श्याम
—स्मगलरों को रंगे हाथ पकड़ते हैं!
सैर करने निकले राम श्याम,
देख रास्ते में गड़बड़ हुए हैरान!
"चोर नहीं... है ये स्मगलरों का सरदार, राम
नाम है इसका जालगुलाम."
"इंस्पेक्टर तुम फौरन इधर आओ, स्मगलरों को पकड़कर जेल ले जाओ."
स्मगलर डरकर वहां से भागे,
पैर उनके फिसले, वो न जा पाये आगे.
"पैरों के नीचे उनके, मैंने पॉपिन्स पैकेट थे फेंके, इन्हें खोल के आओ हम सब खायें मज़े से."

रसीली प्यारी मज़ेदार

पारले पॉपिन्स

फलों के स्वादवाली गोलियां

५ फलों के स्वाद—
रासबेरी, अननास, नींबू,
संतरा और मोसंबी

everest/981/pp-hn

अन्तर्राष्ट्रीय गुणमान के
अनुरूप निर्मित सैनेटरीवेयर
और वॉल टाइल्स

HT-HSI 8124 R

VITREOUS

हिन्दुस्तान सैनेटरीवेयर
एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड
२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता ७०००७१

सोमानी-पिलकिंगटन्स लिमिटेड
कसार, रोहतक, हरियाना

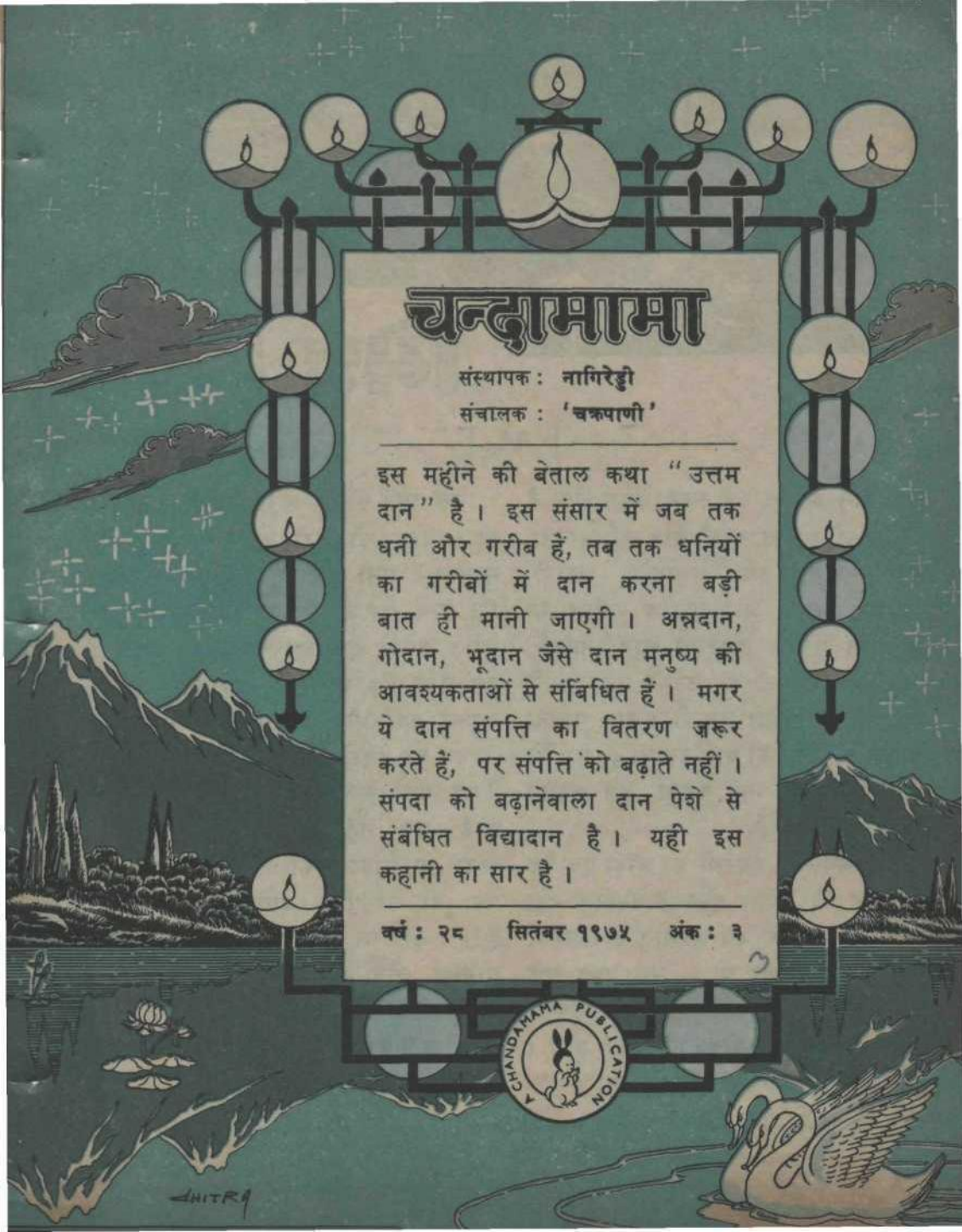

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'

इस महीने की बेताल कथा "उत्तम दान" है। इस संसार में जब तक धनी और गरीब हैं, तब तक धनियों का गरीबों में दान करना बड़ी बात ही मानी जाएगी। अन्नदान, गोदान, भूदान जैसे दान मनुष्य की आवश्यकताओं से संबिधित हैं। मगर ये दान संपत्ति का वितरण ज़रूर करते हैं, पर संपत्ति को बढ़ाते नहीं। संपदा को बढ़ानेवाला दान पेशे से संबंधित विद्यादान है। यही इस कहानी का सार है।

वर्ष : २८ सितंबर १९७५ अंक : ३

CHANDAMAMA PUBLICATION

CHITRA

मित्र-भेद

[२६]

बुद्धिमान व्यक्ति यह स्वयं समझ लेता है कि जो व्यक्ति उसकी बात नहीं मानता, उसे समझाना तथा जुआखोर, शराबी, पराजित व्यक्ति और निराश व्यक्ति को हितवचन सुनाना खतरे से खाली नहीं है, जैसे हीरवाली लकड़ी टूटेगी पर झुकती नहीं। वैसे ही जो हमारी सलाह माँगता है, उसीको हित की बातें बतानी हैं, पर जो हम पर विश्वास नहीं करता, उसे कदापि सलाह नहीं देनी है।

एक जंगल में गवरैयों का जोड़ा एक पेड़ की डाल पर अपना घोंसला बनाकर रहा करता था। एक वर्ष बरसात के दिनों में सर्दी भी पड़ रही थी। उस वक़्त एक बंदर वर्षा में भीगकर सर्दी में ठिठुरते हुए उसी पेड़ के नीचे आ खड़ा हुआ। उसका शरीर थर-थर कांप रहा था।

उस वक़्त घोंसले में सिर्फ़ मादा गवरैया थी। बंदर की बुरी हालत देख उसने सुझाया–"सुनो भाई, तुम्हें मानव के जैसे मुँह, हाथ, पैर भी हैं; तुम भी मनुष्यों की भाँति अपना एक घर क्यों नहीं बनाते? इस तरह पेड़ के नीचे खड़े होकर मूर्ख बनकर सर्दी और वर्षा में कांप रहे हो?"

इस पर बंदर ने क्रोध में आकर सोचा–"यह बात सच है कि मैंने अपने लिए कोई घर नहीं बनाया। मगर ऐसे दृष्टों के निवास को तोड़-फोड़कर फेंक देना तो मेरे लिए बायें हाथ का खेल है!" यों सोचकर उसने गवरैये का घोंसला तोड़ डाला और उसके टुकड़े टुकड़े करके फेंक दिया।

मादा गवरैया उड़ चली गई और इस तरह उसने अपनी जान बचा ली।

अंतिम पृष्ठ का चित्र

इसी प्रकार सूचीमुखी भी अपने मन से बंदर को सलाह देने गई। तब नाराज़ होकर बंदर ने सूचीमुखी को पकड़कर पत्थर पर दे मारा, जिस से वह मर गई।

करटक ने दमनक को यह कहानी सुना कर कहा–"मूर्ख व्यक्ति को विवेकपूर्ण बातें सुनाना भी बेकार है। ऐसे व्वक्ति में विवेक होगा भी तो इस प्रकार का होगा जैसे एक झार में दीपक रखकर उसपर ढक्कन बंद करने के समान होगा। तुम्हारा यह स्वभाव ही जन्मजात है। तुम भी दुष्टबुद्धि के समान हो।"

"दुष्टबुद्धि की वह कैसी कहानी है?" दमनक ने पूछा। इस पर करटक ने दुष्टबुद्धि की कहानी यों सुनाई :

दुष्टबुद्धि की कहानी

एक शहर में दुष्टबुद्धि तथा धर्मबुद्धि नामक दो वैश्य युवक थे। दोनों में घनिष्ट मित्रता थी। धर्मबुद्धि उत्तम स्वभाव का था और ईमानदार भी। मगर वह यह नहीं जानता था कि दुष्टबुद्धि अनेक प्रकार की बुरी लतों का शिकार है।

अपनी बुरी लतों की पूर्ति के लिए दुष्टबुद्धि ने अपार धन कमाना चाहा, और धर्मबुद्धि को दूर के देशों में जाकर व्यापार करने जाने की सलाह दी : "नये देश देखने और अधिक मात्रा में धन-

संग्रह करने के लिए यही एक अच्छा मौक़ा है। यदि हम जवानी में दुनिया देख न पायेंगे तो बुढ़ापे में याद करने के लिए हमारे पास रह ही क्या जाएगा? दुनिया में कितनी भाषाएँ बोली जाती हैं, किस प्रकार के आचार-व्यवहार हैं, लोग कैसे पहनते व खाते-पीते हैं, ये सब न जानने पर हमारा जन्म ही बेकार है। देशाटन किये बिना हम अपनी ज्ञानसंपत्ति और कलाओं का विकास नहीं कर सकते। इसलिए चलो, भ्रमण के लिए तैयार हो जाओ।"

धर्मबुद्धि ने मान लिया।

इसके बाद वे दोनों एक अच्छे मुहूर्त पर घर से निकल पड़े और कुशलपूर्वक

एक अज्ञात देश में पहुँचे। यात्रा के दौरान में धर्मबुद्धि को एक हज़ार स्वर्णमुद्राओं वाला गड़ा हुआ एक कलश मिल गया।

इस पर उसने दुष्टबुद्धि से कहा– "हमारी क़िस्मत प्रबल मालूम होती है। चलो, हम घर लौट जायेंगे। धन या विद्या का ज्ञान प्राप्त करने जानेवाले को यदि वह अनायास हाथ लग जाता है तो घर की हवा का लगना सहज है।"

दुष्टबुद्धि ने भी धर्मबुद्धि की बात मान ली। दोनों अपने गाँव लौट पड़े। जब वे दोनों गाँव के निकट पहुँचे, तब धर्मबुद्धि ने दुष्टबुद्धि से कहा–"दोस्त! तुम इन स्वर्णमुद्राओं में से आधा ले लो। हम शीघ्र ही अपने घर पहुँचकर उत्सव मनाने जा रहे हैं।"

अपने मन में लोभ को पालनेवाले दुष्टबुद्धि ने कहा–"मित्र, इतना सारा धन एक साथ हमें अपने रिश्तेदारों तथा दोस्तों को दिखलाना उचित नहीं है। वे भी माँग बैठेंगे। अलावा इसके विवेकशील व्यक्ति अपने पास भले ही थोड़ी सी संपत्ति हो, उसे प्रकट नहीं करता। धन पाप पूर्ण होता है। वह तपस्वियों तक को विचलित बना देता है। इसके साथ ही जब तक यह सोना हम दोनों की सम्मिलित संपत्ति बना रहेगा, तब तक हमारी मित्रता भी दृढ़तर होती जाएगी। इसलिए हम पहले दोनों सौ-सौ स्वर्ण मुद्राएँ ले लेंगे, बाक़ी आठ सौ स्वर्ण मुद्राएँ कलश के साथ जंगल में कहीं गुप्त रूप से छिपा रखेंगे। इस प्रकार करने से हमें इस बात का पता लग जाएगा कि यह संपत्ति हमारे लिए लाभदायक है या नहीं! जब-जब हमें ज़रूरत पड़ेगी, तब-तब आकर हम इसे लेते जायेंगे।"

दुष्टबुद्धि की सलाह पर धर्मबुद्धि को कोई संदेह न हुआ; दोनों जंगल के एक निर्जन प्रदेश में पहुँचे। वहाँ पर उस संपत्ति को गाड़कर अपने घर लौट आये।

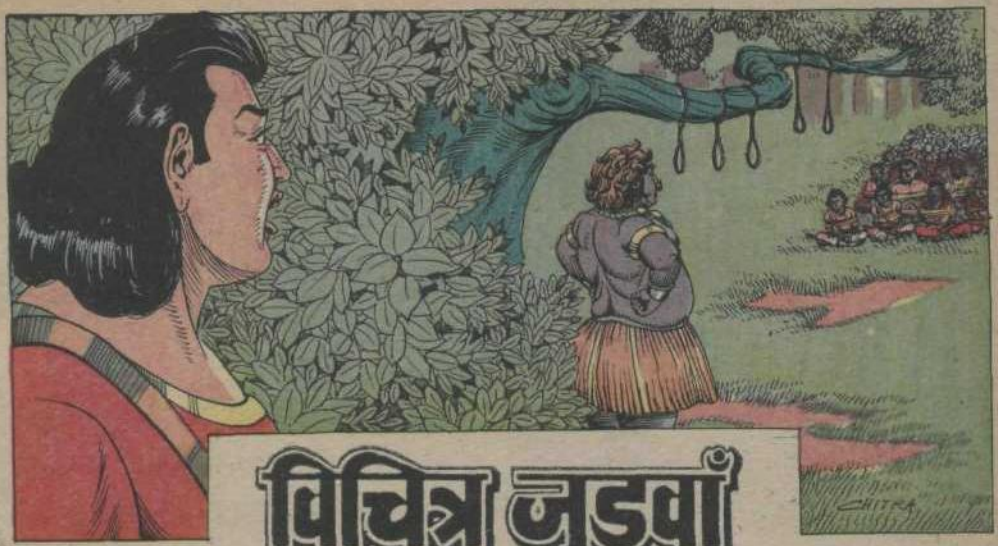

विचित्र जुड़वाँ

[१४]

[राक्षस के द्वारा कुएँ में ढकेला गया उदयन अपनी मांत्रिक थैली की मदद से बाहर निकल आया । तदुपरांत श्रावस्ती नगर में जाकर राजा को राजकुमारियों का समाचार दिया, पुनः जादू के महल में लौट आया । वहाँ पर उसे एक पेड़ की डाल से लटकनेवाले पांच फांसी के फंदे तथा राक्षस दिखायी दिये । बाद...]

उदयन उस भयंकर दृश्य को देख कांप उठा । उसकी समझ में न आया कि क्या करना चाहिए! यदि अदृश्य रूप को प्राप्तकर उन्हें मुक्त करना चाहे, वह भी संभव न था । क्योंकि श्रावस्ती से लौटते वक़्त दुर्भाग्यवश वह सफ़ेद भस्म को खो बैठा था । इसलिए यह जानते हुए भी कि उसके भाई वगैरह कुछ ही मिनटों में फांसी पर लटकाये जानेवाले हैं, उदयन कुछ न कर पाया, सिवाय छिपकर देखते रहने के । उसका शरीर पसीने से तर हो गया । उसे प्रत्येक पल एक युग के समान प्रतीत होने लगा ।

इस बीच राक्षस बंदियों को एक पेड़ के पास ले गया । उन सब के कंठों में फांसी के फंदे डाल दिये । गुप्त रूप में छिपा हुआ उदयन दौड़कर आगे बढ़ने को हुआ, तभी उसे यह पुकार सुनाई दी–"ठहर जाओ ।"

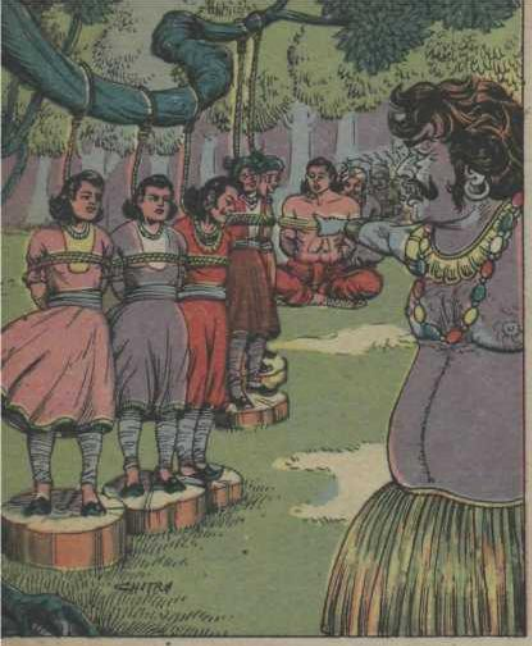

उदयन चकित हो देखता रहा । वह पुकार दाढ़ीवाले की थी । वह राक्षस से यों कह रहा था–"इन लोगों की रक्षा करने के ख्याल से आज तक मैंने तुम से एक बात गुप्त रखी । मगर इस बात को गुप्त रखकर भी मैं इन्हें बचा न पाया । उल्टे मेरे भी प्राण खतरे में पड़ गये हैं । इसलिए मैं उस बात को गुप्त रखना नहीं चाहता । आज तक तुमको तथा मुझको भी धोखा देते आनेवाले ये तीनों युवक जुड़वें भाई हैं..." दाढ़ीवाला कुछ और कहने को हुआ ।

राक्षस ने दाढ़ीवाले की बातों को रोकते हुए कहा–"क्या कहा? ये जुड़वें भाई हैं? तुम इस बार भी मुझको धोखा देना तो नहीं चाहते? यदि ये जुड़वें होते तो मेरे हाथों से कैसे बच जाते?"

"तुम्हारा कहना सही है । मगर तुमने ही जान-बूझकर इन्हें छोड़ दिया है!" इन शब्दों के साथ दाढ़ीवाले ने लाचार हो कर जुड़वें भाइयों के दृष्टिदोष इत्यादि सारा वृत्तांत सुनाया ।

सारी बातें सुनकर राक्षस ने कहा–"तो देवी की बलि के लिए आवश्यक पचास जुड़वें मिल गये हैं न? क्या तुम्हारी बातों को सच मानूं? यह कैसे साबित होगा कि ये तीनों जुड़वें हैं? मैं इन्हीं से पूछ लेता हूँ?" फिर संध्या कुमार तथा निशीथ की ओर मुड़कर पूछा–"क्या दाढ़ीवाले की बातें सच हैं? तुम लोग सचाई को छिपाओगे, तब भी तुम्हारे प्राण बचेंगे नहीं । इसलिए झूठ मत बोलो । यदि सचमुच तुम लोग जुड़वें हों तो एक महान कार्य के लिए प्राण अर्पित करने की तृप्ति तुम्हें प्राप्त होगी ।"

संध्या कुमार तथा निरीथ वे आँसू बहाते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा–"हाँ, इसका कहना सच है!"

निकट ही छिपा हुआ उदयन ये बातें सुन स्तब्ध रह गया । उसे लगा कि दाढ़ीवाले पर विश्वास करके उसके प्राण बचाये

तो उसका यही परिणाम है? उसने सोचा कि तत्काल ही दाढ़ीवाले का वध करे, तभी राक्षस का गर्जन सुनाई दिया। वह ठिठक कर रह गया। उसने सोचा कि जल्दबाजी में आकर कुछ कर बैठना उचित न होगा!

"तो वह तीसरा व्यक्ति कहाँ पर है?" राक्षस ने दाढ़ीवाले से पूछा।

"घर जाने की बात बताकर एक हफ़्ते पहले वह यहाँ से चला गया, पर अभी तक लौट नहीं आया। शायद रास्ते में वह किसी खतरे में फंस गया हो! मुझे इस बात का विश्वास भी नहीं है कि वह शीघ्र ही लौट आएगा।" दाढ़ीवाले ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है! अब देरी क्यों करे? कल ही मैं सबकी बलि देकर देवीजी को प्रसन्न करूँगा। मुझे आवश्यक सारा प्रबंध करना है! तुम यह मत सोचो कि तुम पर विश्वास करके मैं तुम को मुक्त करूँगा।" यों कहकर राक्षस ने संध्या कुमार, निशीथ, राजभट तथा दाढ़ीवाले को भी अलग-अलग पेड़ों से बाँध दिया, तब ज़ोर से ठहाके मारे, फिर गीध के रूप में आकाश में उड़ चला।

राक्षस के चले जाते ही उदयन ने क्रोध में आकर झट म्यान से तलवार खींची और दाढ़ीवाले की ओर झपटकर उसको मारने को हुआ।

"ठहर जाओ! जल्दबाजी मत करो! मेरी बातें शांति से सुन लो, इसके बाद

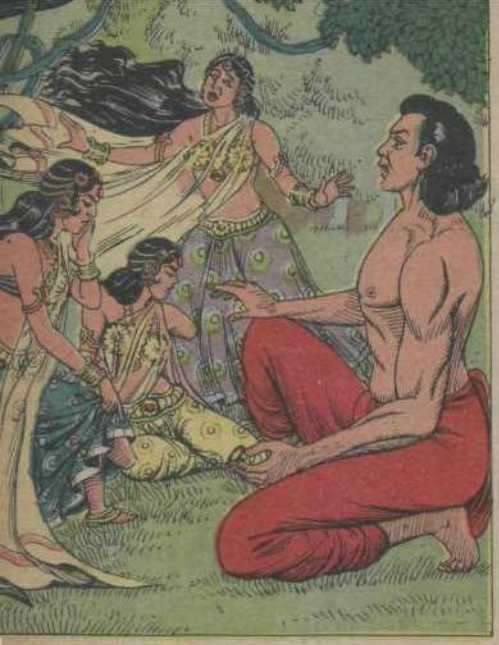

तुम जैसा उचित समझो, करो।" दाढ़ीवाले ने कहा।

"और सुनना क्या? जो कुछ सुना, पर्याप्त है! तुम को मैंने प्राणों के साथ छोड़ दिया, तो उसका बुरा नतीजा मुझे मिल रहा है। तुम्हारे साथ कुछ भी करूँ, वह थोड़ा ही होगा?· और ठहरना कैसा?" इन शब्दों के साथ उदयन हुँकार कर उठा।

"भाई! मेरे संबंध में तुम्हारे गलत विचार रखने में आश्चर्य की कोई बात नहीं है! फिर भी मेरी बातों को सावधानी से सुन लो। मुझे इसलिए तुम लोगों के जन्म का रहस्य राक्षस को बताना पड़ा कि इस समय फाँसी के फंदे से बच जाय तो इतमीनान से कोई उपाय सोचा जा सकता है! इसके अतिरिक्त तुम लोगों को बचाने का दूसरा कोई उपाय न था। मेरी जगह तुम भी होते तो इसके अतिरिक्त कुछ कर न सकते थे। मेरा उपाय कारगर सिद्ध हुआ। कल तक तुम लोगों की बलि को स्थगित रखना सचमुच तुम लोगों का भाग्य ही कहा जाएगा।" दाढ़ीवाले ने समझाया।

ये बातें सुन उदयन सोच में पड़ गया। फिर बोला–"मान लो कि मैं ने तुम्हारी बातों पर यक़ीन किया। मगर यह बताओ कि सवेरा होने के पहले हम लोग उसके जाल से कैसे बच सकते हैं?"

"यह बात भी मैंने पहले ही सोच रखी है। चलो, पहले हम इन लोगों के बंधन खोल दें।" इसके बाद दोनों ने मिलकर संध्या कुमार, निशीथ तथा राजभटों के बंधन खोल दिये। तब उन्हें साथ लेकर वे तालाब के पास पहुँचे। उन्हें देखते ही राजकुमारियाँ प्रसन्न हो उठीं और तालाब के किनारे आ गईं।

दाढ़ीवाले ने उदयन से कहा–"वह लाल अंजन निकालो।"

उदयन ने लाल अंजन दाढ़ीवाले के हाथ दिया। इस पर उसने राजकुमारियों को अपने निकट बुलाया। दाढ़ीवाले ने

पहले वह अंजन सुहासिनी के कंधे पर मल दिया जिससे उसकी एक भुजा गायब हो गई। फिर सुभासिणी को बिठाकर उसके घुटने पर अंजन मल दिया, उसका एक पैर गायब हो गया। पुनः थोड़ा अंजन निकाल कर उसने सुकेशिनी की आँखों पर मल दिया। सुकेशिनी अंधी हो गई। इस प्रकार तीनों राजकुमारियों को विकलांग बनाये देख उदयन ने क्रोध में आकर पूछा– "यह तुम ने क्या कर दिया? कोई उपाय बताने का प्रलोभन देकर तुमने इन्हें लूली, लंगड़ी व अंधी बनाया?"

"तुम अपनी जल्दबाजी छोड़ते प्रतीत नहीं होते? हर बात पर संदेह क्यों करते हो?" इन शब्दों के साथ दाढ़ीवाले ने उदयन के कानों में धीमी आवाज में कोई गुप्त बात कही।

उदयन संतुष्ट हो कर बोला–"आज तक राजकुमारियाँ पूर्ण स्वस्थ रहीं। आज अचानक इस प्रकार ये विकलांग बन जायेंगी तो कल क्या राक्षस तुम पर शक न करेगा? इससे हमारा उपकार होने के बदले क्या हानि न होगी?"

"ये सारी बातें फिर सोच लेंगे। फिलहाल हमारे सामने कोई दूसरा उपाय नहीं है। कल जब राक्षस आकर देखेगा, तब हम पहले की भांति पेड़ों से बंधे रहेंगे।

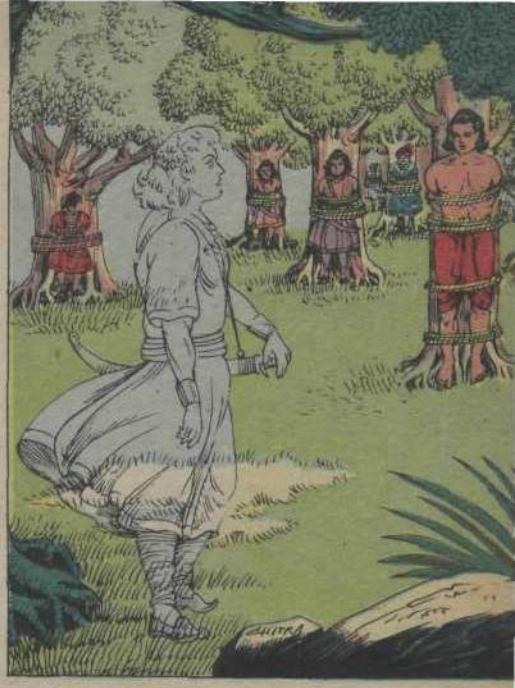

तुम अपने ऊपर भस्म छिड़का कर अदृश्य रूप में रह कर देखते रहो कि क्या-क्या होने वाला है?" दाढ़ीवाले ने बताया।

उदयन दाढ़ीवाले की बातों पर चकित रह गया। उसने कहा–"यदि वह भस्म होता तो ये सारी परेशानियाँ उठानी क्यों पड़ती? श्रावस्ती नगर से लौटते हुए मैं ने वह भस्म कहीं खो दिया है? अब हम इस विपदा से कैसे बच सकते हैं?"

"क्या कहा? भस्म खो दिया? कोई बात नहीं! तुम हमें जो भस्म दे गये थे, हम ने उसका उपयोग नहीं किया। यह लो।" यों कहते दाढ़ीवाले ने पोटली उदयन के हाथ थमा दी।

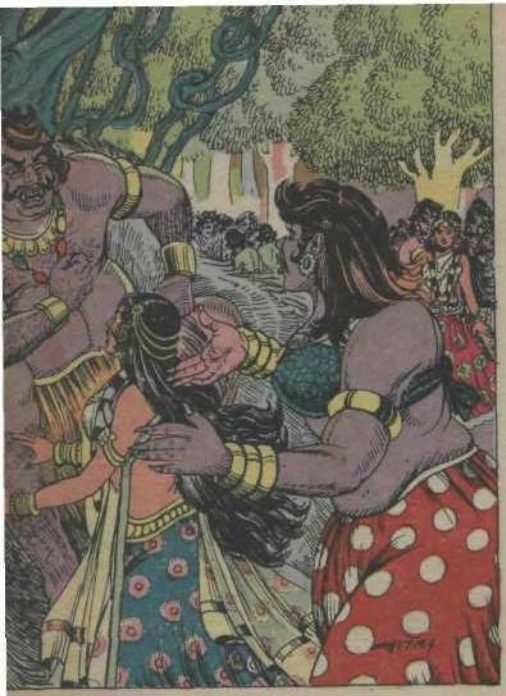

इसके बाद उदयन ने उन्हें पूर्ववत् पेड़ों से बांध दिया और वह अदृश्य रूप में रह गया।

* * *

दूसरे दिन प्रातःकाल के समय एक बवंडर उठा। सब ने अनुमान लगाया कि राक्षस आ रहा है। इस पर संध्या कुमार, निशीथ, दाढ़ीवाला तथा राजभट भी थके-मांदे का अभिनय करते वृक्षों से सटकर लुढ़के रह गये। इसके थोड़ी देर बाद राक्षस आ पहुँचा। उसके साथ दो आदमी अपने कंधों पर फरसे लिये आ पहुँचे। उनके पीछे कई लोग फूल मालाएँ लिए चले आ रहे थे।

राक्षस जब संध्या कुमार तथा निशीथ के निकट पहुँचा तब वह अपने लिए तैयार की गई गद्दी पर जा बैठा। इसके उपरांत उसने अपने अनुचरों को आदेश दिया– "सरोवर में रहनेवाले सब जुड़वों को नहला कर सजाओ, तब एक-एक को लाकर मेरे सामने खड़ा कर दो।"

दूसरे ही क्षण राक्षस के अनुचर अपने-अपने काम में लग गये। कोई स्नान करा रहा था, दूसरा वस्त्र पहना रहा था, कुछ लोग उन्हें लाकर राक्षस के सामने हाज़िर कर रहे थे। राक्षस अत्यंत प्रसन्न दीख रहा था। अपने सामने उपस्थित होनेवाली राजकुमारियों तथा राजकुमारों को संबोधित कर वह पूछ रहा था–"तुम कनकपुरी की राजकुमारी हो न? तुम अवंती राजा की रूपवती कन्या हो न? तुम मणिपुर के युवराज हो न?" यों एक एक का नाम लेकर पुकार रहा था; बेचारे वे लोग सर झुकाये आँसू बहा रहे थे।

इतने में एक परिचारिका ने एक और राजकुमारी को लाकर राक्षस के सामने खड़ा किया और कहा–"राक्षसेश्वर! आप इस अंधी कन्या को क्यों लाये? क्या देवीजी इसको स्वीकार करेंगी?"

राक्षस ने चकित हो पूछा–"क्या कहा? यह अंधी है?" ये शब्द कहते वह गद्दी से

उत्तरा, राजकुमारी की जांच करने गया। तभी दूसरी परिचारिका ने पूछा–"प्रभू! आप इस लंगड़ी राजकुमारी को क्यों लाये?" इन शब्दों के साथ उसने लंगड़ी राजकुमारी को राक्षस के सामने उपस्थित किया।

राक्षस का क्रोध भड़क उठा। उसकी आँखों में क्रोध उबल रहा था। वह गरज उठा–"यह धोखा है? दगा है?" उसके गर्जन से जमीन और आसमान एक साथ गूंज उठे।

राक्षस का क्रोध उमड़ पड़ा। एक ही छलांग में वह दाढ़ीवाले के पास जाकर उसे पेड़ के साथ उखाड़कर ललकार उठा–"यह तुम ने कैसा धोखा दिया? मैं ने स्वस्थ राजकुमारियों को लाकर सरोवर में डाल दिया था। अब ये कुरूपिनी राजकुमारियाँ कैसे आ गईं? यह तुम्हारी ही करतूत है! साफ़-साफ़ सच्ची बात बताओगे या अभी मैं तुम्हारी बलि दे दूं?"

दाढ़ीवाले ने विचलित हुए बिना ही कहा–"चिल्लाने से कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। तुम्हारा संदेह है न कि मैंने ही यह काम किया है? थोड़ी देर के लिए शांत हो जाओ। मेरी बातें सावधानी से सुन लो! इसके बाद तुम जो कुछ करना चाहते हो, करो।"

"बस, रहने दो! मैं ने सारा प्रबंध किया तो तुम ने मेरी आशाओं पर पानी फेर दिया। जो कुछ बताना चाहते हो,

जल्दी बता दो?" इन शब्दों के साथ राक्षस ने पेड़ को नीचे फेंक दिया।

"मैं भी स्वयं नहीं जानता कि ये राजकुमारियाँ कुरूपिनी कैसे बन गईं? पर मुझे एक संदेह हो रहा है! राजकुमारियों को इस रूप में बदलने की प्रज्ञा यहाँ से भागनेवाला उदयन रखता है। जुड़वें भाइयों के दृष्टिदोष को मैं ने जब दूर किया तब मैं ने यह रहस्य भी डर के मारे उन्हें बता दिया था। इस के लिए आवश्यक अंजन वगैरह भी उसके पास हैं। अगर वह जिंदा रहा तो कभी न कभी तुम्हारे हाथों में पड़ जाएगा। तब उसी के द्वारा इन लोगों की अंगविकलता को दूर किया जा सकता है! तब तक इन युवकों को बन्दी बनाकर रखो। मैं इससे अधिक कोई सलाह नहीं दे सकता। फिर आप की जो मर्जी!" दाढ़ीवाले ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

"अच्छी बात है! यदि इस बार वह मेरे हाथों में पड़ गया तो समझ लो कि वह मर गया है। चलो, पहले तुम लोगों की खबर लेनी है।" इन शब्दों के साथ राक्षस संध्या कुमार, निशीथ, राजभट तथा दाढ़ीवाले को भी एक रस्से से बांधकर अपने साथ खींच ले गया।

ये सारी घटनाएँ देखते उदयन राक्षस का अनुसरण कर रहा था। थोड़ी दूर जाकर राक्षस पत्तों के एक ढेर के पास रुक गया। वह गीध रूप को प्राप्तकर अपने पंखों को जोर से फड़फड़ाने लगा। तब सारे पत्ते तितर-बितर हो गये। वहाँ पर पृथ्वी में एक द्वार दिखाई पड़ा। राक्षस ने संध्या कुमार, निशीथ, राजभट तथा दाढ़ीवाले को भी उस द्वार के भीतर ढकेल दिया। फिर से द्वार बंद किया, पत्ते जमा करके सरोवर के निकट आया।

अलंकृत किये गये जुड़वों का सावधानी से पहरा देने का अपने अनुचरों को राक्षस ने आदेश दिया। अंगविकलता प्राप्त सुहासिनी, सुभाषिणी तथा सुकेशिनी को उठाकर गीध रूप में उड़ चला।

(और है)

उत्तम दान

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा– "राजन, यह कोई नहीं बता सकता कि तुम जो श्रम उठा रहे हो, इसका तुम्हें क्या पुण्य मिलेगा? इस बात का निर्णय करना किसी के लिए संभव नहीं कि पुण्य के कार्यों में कौन बड़ा है और कौन छोटा है? इसके उदाहरण स्वरूप मैं तुम्हें एक छोटी सी कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने केलिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में किसी देश के एक गाँव में श्रीपति नामक एक बनिया तथा रामनाथ नामक एक किसान थे। दोनों आर्थिक दृष्टि से संपन्न थे और स्वभाव से सज्जन भी थे। मगर दान देने में श्रीपति विशेष लोकप्रिय था।

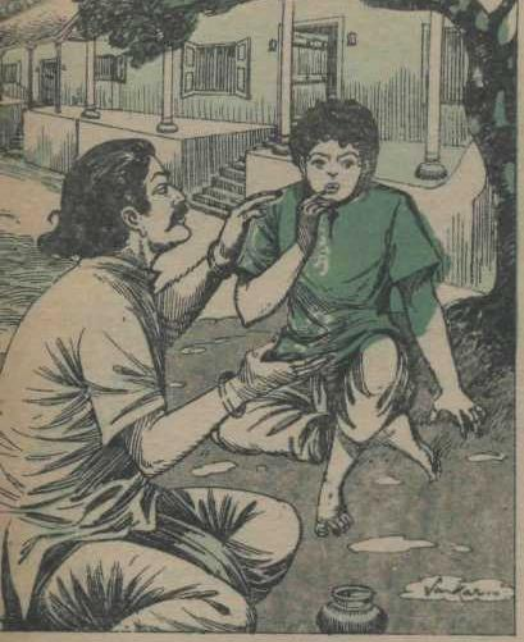

एक दिन श्रीपति के घर से होते हुए एक युवक निकल पड़ा। वह कड़ी धूप तथा कई दिनों की भूख से गश खाकर गिर पड़ा। श्रीपति ने उसे देखा। तुरंत वह दौड़कर उसके निकट पहुँचा। उस युवक को अपने घर ले आया। मुँह पर पानी छिड़क दिया। उसके होश में आने पर उसका सारा वृत्तांत जान लिया।

वह युवक एक याचक था। दो-तीन दिनों से खाना न खाया था, इस वजह से वह बेहोश हो गया था। श्रीपति ने उस युवक को भर पेट खाना खिलाया और लेटने के लिए एक चटाई दी। उस दिन रात को भी वह युवक श्रीपति के घर भोजन करके सो गया। दूसरे दिन सवेरे श्रीपति से विदा लेकर चला गया।

लेकिन दिन भर भटकने पर भी उस युवक को कहीं भी खाना न मिला। इसलिए उस दिन रात को वह युवक पुनः श्रीपति के घर लौट आया और उसी के घर में खाना खाकर सो गया।

रामनाथ ने श्रीपति से पूछा–"दो दिन से तुम्हारे घर खाना खाकर सोनेवाला वह युवक कौन है?" श्रीपति ने सारा वृत्तांत सुनाया। रामनाथ को उस युवक का व्यवहार अच्छा न लगा। तीसरे दिन सवेरे रामनाथ ने उस युवक से मिलकर पूछा–"सुनो भाई! तुम तो युवक हो! लूले-लंगड़े भी नहीं हो! ऐसी हालत में कोई काम-वाम करके अपना पेट क्यों नहीं भरते? इस तरह भीख क्यों माँगते हो?"

इस पर युवक ने यों जवाब दिया–"महाशय, मैं अपने माँ-बाप का इकलौता पुत्र हूँ। इसलिए मुझे बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा। इसका नतीजा यह निकला कि मैं कोई भी विद्या सीख न पाया। माँ-बाप की छत्र-छाया में पलता रहा। उनके मरने पर मैं कोई काम-धंधा करने की हालत में न था। इसलिए मुझे भीख माँगकर अपना पेट भरना पड़ रहा है।"

रामनाथ थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब बोला–"भाई, तुम्हें इस तरह भीख माँगने की ज़रूरत नहीं है, और न ज्यादा श्रम करने की आवश्यकता है। तुम जैसे लोग अधिक संख्या में मेरे यहाँ काम कर रहे हैं। मेरे पास गायों की बड़ी रेवड़ है। मैं तुम्हें उपले बनाकर बेचने का तरीक़ा सिखाऊँगा।" यों समझाकर उसको अपने साथ मवेशीखाने में ले गया। वहाँ पर उसने उपले बनाने का तरीक़ा बताया। सूखे उपलों को उस युवक के द्वारा शहर में ले जाकर यह भी सिखाया कि उन्हें कैसे बेचे जाय?

युवक ने यह काम जल्दी अच्छी तरह से सीख लिया। वह रोज़ उपले बनाता और उन्हें शहर में ले जाकर बेच आता। जो आमदनी होती, उसमें से आधा अंश रामनाथ को दे देता, बाक़ी पैसों से आराम से अपने दिन बिताने लगा।

एक बार उस देश में अकाल पड़ा। राजा ने पंडितों तथा ज्योतिषियों को बुला कर उनकी सलाह माँगी। उन लोगों ने सुझाया कि दान-धर्म के द्वारा जिन लोगों ने उत्तम पुण्य का संपादन किया है, वे लोग अपना आधा पुण्य दान करे तो देश में भारी वर्षा होगी और इस तरह अकाल दूर हो सकता है।

मगर कोई यह न बता पाया कि दानों में से उत्तम दान कौन है? इसलिए राजा ने अपने देश में इस आशय का ढिंढोरा

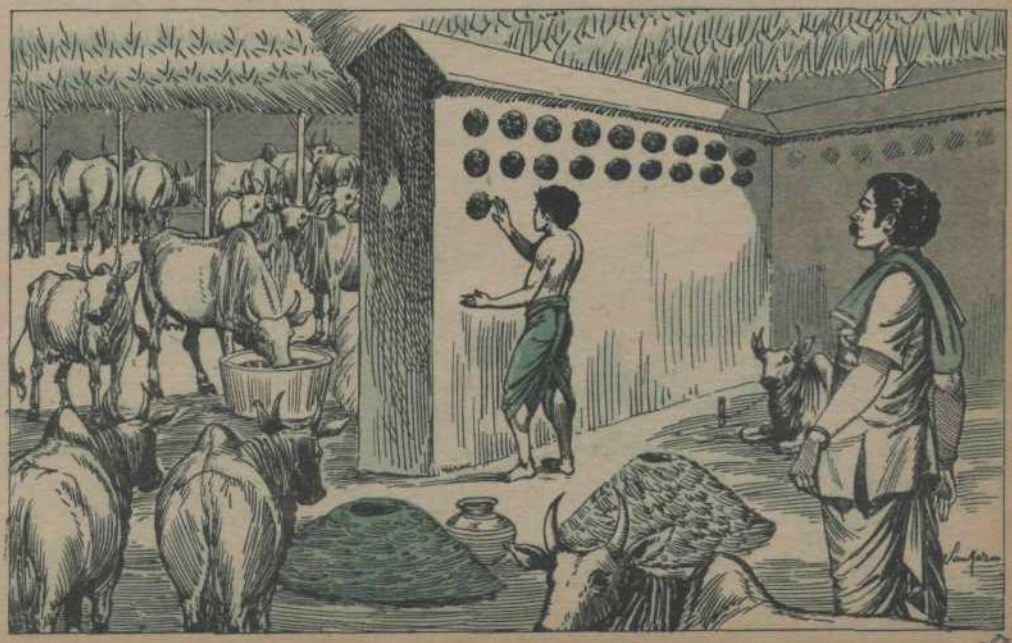

पिटवाया कि सभी दाता अपने पुण्य में से आधा अंश दान करके जाय। फिर क्या था, अनेक व्यक्ति राजा के दुर्ग में पहुँचे और वहाँ पर होनेवाले पुण्य दान के यज्ञ में शास्त्र विधि से अपना आधा पुण्य दान करने लगे। पर इससे भी अकाल की स्थिति में कोई सुधार न हुई।

फिर भी राजा निराश न हुआ। उसने यज्ञ को चालू रखा। यज्ञ का समाचार श्रीपति तथा रामनाथ को देरी से मिला। राजा के आदेशानुसार वे दोनों भी राजधानी में पहुँचे। श्रीपति ने पहले अपने पुण्य का आधा अंश देश के लिए दान किया। इसके बाद रामनाथ ने भी उसका अनुसरण किया। फिर क्या था? तत्काल आसमान में बादल उमड़ आये, बिजली चमकी। भारी वर्षा हुई, इस तरह अकाल दूर हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा– "राजन, यह सच है कि श्रीपति ने ज़िंदगी भर दान-धर्म किया और महान दाता के रूप में उसने यश भी प्राप्त किया। ऐसी हालत में श्रीपति के पुण्य की अपेक्षा रामनाथ का पुण्य कैसे महत्वपूर्ण हो गया? अन्नदान से बढ़कर कौन दान है? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया– "इस में कोई संदेह नहीं है कि श्रीपति ने अन्नदान करके कुछ लोगों की एक-एक जून की भूख को ज़रूर मिटाया है, पर रामनाथ ने अनेक लोगों को जीविकोपार्जन का सही रास्ता दिखाकर ज़िन्दगी भर उनकी भूख की समस्या को हल किया है। इसलिए निश्चय ही रामनाथ का पुण्य महत्वपूर्ण कहा जा सकता है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि समस्त दानों में से विद्या का दान सर्वोत्तम है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

जब आँखें खुलीं

रामापुर नामक गाँव में बापालाल नामक एक धनी था। उसके यहाँ पर्याप्त संपत्ति थी और उसकी पत्नी भी अत्यंत गुणवती और अनुकूलवती थी। इस कारण उसका जीवन कई वर्षों तक सुखपूर्वक बीत गया। मगर जब अनेक वर्षों के बाद उसके यहाँ एक पुत्र हुआ और ज्यों-ज्यों वह बढ़ता गया त्यों त्यों बापालाल की समस्या बढ़ती गई।

बापालाल का लड़का नंदन बचपन से ही नटखट था। बापालाल यह सोचकर उसके प्रति उपेक्षा दिखाने लगा कि नंदन तो अभी छोटा लड़का ही है, बड़ा हो जाने पर वह अपनी इन आदतों को बदल लेगा। लेकिन उम्र के बढ़ने के साथ उसका नटखटपन भी बढ़ता ही गया। वह किसी की बात की परवाह न करता था। दस साल पूरे हो जाने पर भी वह वर्णमाला तक सीख न पाया। उसको खेल-कूदों से विमुख करके पढ़ाई में उसका मन लगाने की बापालाल ने बड़ी कोशिश की, किंतु कोई फ़ायदा न रहा। इकलौता पुत्र था, इसलिए बापालाल उसके प्रति कठोर व्यवहार कर न पाता था; पर उसके भविष्य की चिंता बापालाल को सताने लगी।

एक बार बापालाल के घर समस्त शास्त्रों के ज्ञाता विद्यानाथ नामक एक पंडित आया। एक समय बापालाल ने उस पंडित के यहाँ शिक्षा पाई थी। अपने पुराने विद्यार्थी बापालाल को देखने के लिए विद्यानाथ आया था। बापालाल ने वार्तालाप के संदर्भ में अपने गुरु से अपने पुत्र का समाचार सुनाया।

इस पर विद्यानाथ ने मुस्कुरा कर कहा– "बचपन से हद से ज्यादा लाड़-प्यार

दिखाने से बच्चे इसी प्रकार बिगड़ जाते हैं। मैं यहाँ पर एक सप्ताह तक रहकर प्रयत्न करूँगा कि शायद मैं उसे सही रास्ते पर ला सकूँ!"

उस दिन शाम को विद्यानाथ ने नंदन से थोड़ी देर तक बातचीत की। वह नये लोगों को देख सकुचाता न था, बड़े लोगों के प्रति उसके मन में आदर का भाव भी न था। नंदन ने स्वयं बताया कि उसे खेलों से बड़ा प्रेम है।

"मैं देखना चाहता हूँ कि तुम किस तरह के खेल खेलते हो! अगर तुम्हारे खेल मुझे भी पसंद आये तो मैं भी तुम्हारे साथ खेलूँगा। मैं यह भी देखूँगा कि आइंदा तुम्हारे पिता तुम्हें पढ़ने के लिए कभी मजबूर न करें।" विद्यानाथ ने नंदन को समझाया।

विद्यानाथ की बातें नंदन को बड़ी अच्छी लगीं और उसका उत्साह उमड़ पड़ा। वह बोला—"मैं घर में जो खेल खेलता हूँ, क्या वह भी कोई खेल है? मेरे खेल देखना चाहते हो तो गाँव के बाहर पहाड़ पर चले आओ।"

विद्यानाथ ने कहा—"अच्छी बात है! चलो, पहाड़ पर ही चले चलेंगे।"

दोनों जब पहाड़ की ओर चल पड़े तब रास्ते में अनेक लोगों ने विद्यानाथ को देखा और सब कोई उसे प्रणाम करने लगे। इसे देख नंदन आश्चर्य में आ गया। उसने विद्यानाथ से पूछा—"सब लोग तुम्हें झुक-झुककर प्रणाम क्यों करते हैं?"

"मैं इसका जवाब बाद को दूँगा। पहले मुझे तुम्हारे खेल देखने दो।" विद्यानाथ ने जवाब दिया। पहाड़ पर कई लड़के तरह तरह के खेल खेल रहे थे। नंदन को देखते ही सब लड़के उत्साह में आकर उसके पास आने लगे, मगर उसकी बगल में विद्यानाथ को देख पीछे हट गये।

"तुम लोग इनसे डरो मत! ये तो खुद हमारे खेल देखना चाहते हैं, आओ, हम सब खेलेंगे।" नंदन ने सभी लड़कों को प्रोत्साहित किया।

इसके बाद सब बच्चे कई प्रकार के खेल खेलने लगे। विद्यानाथ ने मन ही मन खीझते हुए भी सहनशीलता के साथ बच्चों के खेल देखे।

थोड़ी देर बाद पंडित ने नंदन को बुला कर पूछा–"तुम ने मुझ से पूछा था कि सब लोग मुझे प्रणाम क्यों करते हैं? क्या तुम भी लोगों से ऐसा आदर पाना चाहते हो?"

"पाना तो चाहता हूँ, मगर इस के लिए मुझे क्या करना होगा?" नंदन ने पूछा।

"शायद तुम्हें ये खेल बंद करने होंगे। यदि तुम ऐसा करने को तैयार हो जाओगे तो मैं देखूंगा कि सब लोग तुम्हारा आदर करें। बताओ, तुम खेल बंद करने को तैयार हो?" विद्यानाथ ने पूछा।

"मान लो, मैं खेल बंद करूँगा, लेकिन इसकी क्या गैरंटी है कि आप मुझे लोगों से यह आदर दिला सकेंगे?" नंदन ने लापरवाही से पूछा।

"इस संसार में मेरेलिए कोई असंभव की बात नहीं है। मैं संकल्प करूँ तो किसी व्यक्ति या चीज़ के लिए भी आदर प्राप्त हो जाएगा।" विद्यानाथ ने अभिमान के साथ कहा।

नंदन परिहासपूर्ण हंसी हंसकर इधर-उधर देखता रहा। फिर थोड़ी दूर पर ज़मीन पर पड़े काले पत्थार को अपने पैर से विद्यानाथ की ओर ढकेलते हुए पूछा–"क्या आप इस पत्थर को भी वही आदर दिला सकते हैं?"

विद्यानाथ ने जरा भी विचलित हुए बिना उत्तर दिया–"कल तुम खुद देखोगे कि मैं इस पत्थर को कैसी प्रतिष्ठा दिला देता हूँ!" यों कहकर उस पत्थर को अपने हाथ में ले विद्यानाथ वहाँ से चला गया।

"कोई पागल मालूम होते हैं!" यों कहते सब लड़के हंस पड़े।

विद्यानाथ को पत्थर ले जाते देख नंदन मन ही मन विस्मित हो उठा।

दूसरे दिन नंदन जब नींद से जाग उठा, तब घर के आँगन में कोलाहल मचा हुआ था। इसका कारण जानने के लिए नंदन वहाँ पर पहुँचा तो देखता क्या है? एक मेज़ पर सजीवता का परिचय देते हुए कृष्ण की मूर्ति रखी हुई है। लोग क़तार बाँधकर एक-एक करके आते और प्रणाम करके चले जा रहे हैं। विद्यानाथ वहीं पर खड़ा हुआ था। नंदन को देखते ही बाहर आने का संकेत किया।

"कल तुमने जिस पत्थर को अपने पैर से ठुकरा दिया, उसीको मैंने मूर्ति का रूप दिया है। सब लोग उस मूर्ति को प्रणाम कर रहे हैं। क्या अब भी सही, तुम्हें मेरी शक्ति एवं सामर्थ्य पर विश्वास हो गया है?" विद्यानाथ ने नंदन से पूछा।

नंदन ने मुँह सिकोड़कर कहा–"यह तो पत्थर था, इसलिए आप अपने मन के अनुकूल इसे गढ़ सके, मैं आपकी बातों में थोड़े ही आ सकता हूँ? इसलिए लोगों के द्वारा आदर पाने योग्य किसी भी हालत में आप मुझे मोड़ न सकेंगे।"

विद्यानाथ ने परिहास पूर्वक हँसकर कहा–"पगले! यदि मैं तुम्हें सबके द्वारा आदर पाने योग्य न बना सकूँगा तो मेरा थोड़े ही अपमान होनेवाला है? लोग यही समझेंगे कि तुम से वह पत्थर ही कहीं उत्तम है! यह बात अच्छी तरह से अपने मन में गाँठ बाँध लो।"

ये बातें सुनने पर नंदन की आँखें खुलीं। इसके बाद वह अपने पिता की अनुमति लेकर विद्यानाथ के साथ शिक्षा प्राप्त करने के लिए चल पड़ा।

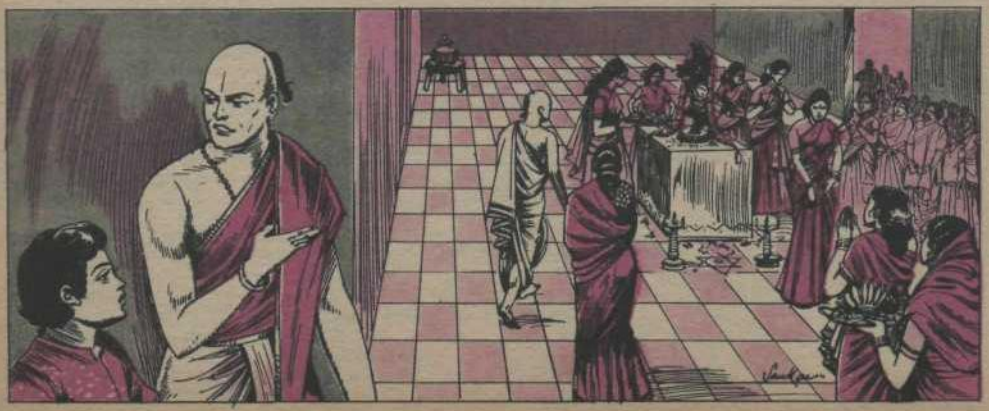

शादी की दावत

एक गाँव के श्मशान में एक पुराने इमली के पेड़ पर कुछ पिशाचियाँ निवास करती थीं। उनमें से एक जवान पिशाची गृहस्थ जीवन बिताये बिना ही पिशाची बन गई थी। इसलिए वह फिर से मानव जीवन प्राप्त करके विवाह कर गृहस्थ जीवन बिताने की प्रबल इच्छा रखती थी।

एक दिन जवान पिशाची ने अपनी इच्छा अन्य पिशाचियों के सामने प्रकट की। इस पर सभी पिशाचियाँ खिल-खिलाकर हंस पड़ीं और बोलीं–"तुम फिर से उस गृहस्थी की दल-दल में फँसना चाहती हो? लगता है कि तुम्हारी अक्ल मारी गई है। आराम से अपने दिन बितानेवाली तुम नाहक़ क्यों दुख मोल लेना चाहती हो?"

"सास की झिड़कियाँ, ननदों से परेशान होकर ही मैंने फाँसी लगाकर आत्महत्या कर ली है।" एक पिशाची ने कहा!

"मैं ऐसे घर ढूंढ लूंगी जिसमें सास और ननदें न हों।" जवान पिशाची ने जवाब दिया।

दूसरे दिन संध्या के समय जब चारों ओर अंधकार फैल रहा था, तब वह जवान पिशाची एक सुंदर युवती में बदल गई। एक उजड़ी सराय के चबूतरे पर बैठकर रोने लगी।

थोड़ी देर बाद उधर से एक सुंदर युवक आ निकला। उसे देखते ही जवान पिशाची बड़ी खुश हो गई, और ज़ोर-शोर से रोने लगी।

"कौन है? अंधेरा फैल गया है, फिर भी यहाँ पर क्यों है?" युवक ने गरज कर पूछा।

जवान पिशाची फूट-फूटकर रोते हुए बोली–"मैं पड़ोसी गाँव की रहनेवाली हूँ। मेरे माँ-बाप मर गये हैं। मैं अनाथ

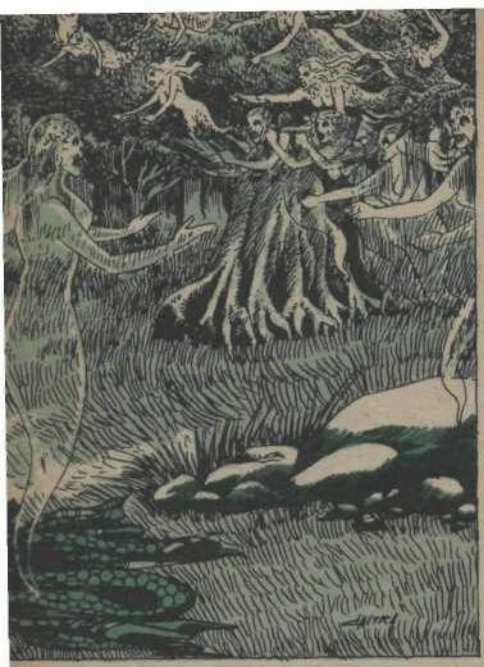

बन गई हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि मेरे दिन कैसे बीतेंगे? मेरा अपना कहनेवाला कोई नहीं है, उल्टे मैं कोई काम-वाम भी करना नहीं जानती।"

युवक को उस पर दया आ गई। उसने पूछा–"किसी के साथ शादी क्यों नहीं कर लेती?"

"यह बात कहना बड़ा ही सरल है। मगर बिना दहेज़ के मेरे साथ कौन शादी करेगा?" पिशाची ने उल्टा सवाल किया।

"अगर तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो मैं तुम्हारे साथ शादी करूँगा।" युवक ने कहा।

"यदि मेरे लिए सास और ननदें हों तो आपत्ति ही हो सकती है।" पिशाची ने कहा।

"मेरे लिए अपना कहनेवाला कोई नहीं है। मैं अकेला हूँ। खाने-पीने की कोई कमी नहीं; रहने को बहुत बड़ा मकान भी है। इससे ज्यादा तुम्हें और क्या चाहिए?" युवक ने जवाब दिया।

"तो चलो, हम अपने घर चलेंगे।" यों कहते जवान पिशाची उठ खड़ी हो गई।

उस युवक का मकान गाँव के मुहाने ही था। दूसरे दिन शादी करके दोनों अपनी गृहस्थी चलाने लगे। आधी रात के वक़्त अपने पति के सो जाने के बाद जवान पिशाची घर से निकल पड़ी और अपना पूर्व निवास इमली के पेड़ के पास पहुँची।

"कौन आया है? यह कैसी हिम्मत है? इसको मारो, पीटो।" सब पिशाचियाँ हो-हल्ला मचाने लगीं। उस दृश्य को देख जवान पिशाची ठठाकर हंस पड़ी और उसने अपने पूर्व रूप को प्राप्त किया।

"अरी, तुम हो! हम तुमको पहचान ही न पाईं। तुम्हारा काम क्या सफल हो गया? हमें दावत कब खिलाती हो?" पिशाचियों ने पूछा।

"हाँ, हाँ! मुझे एक सुंदर युवक मिल गया है। सास-ननदें भी नहीं हैं। बहुत

बड़ा मकान भी है।" यों जवान पिशाची ने डींग मारी।

"तुम्हारा पति कैसे स्वभाव का है? तुम्हारी गृहस्थी कैसी है?" एक पिशाची ने पूछा। "मेरे पति तो माणिक जैसे हैं। मेरे लिए अपने प्राण देने को तैयार रहते हैं। हमारी गृहस्थी मजे में चल रही है। हमारे बीच किसी भी प्रकार के मन मुटाव नहीं हैं। अब मैं चलती हूँ। वे जाग उठेंगे तो न मालूम क्या सोचेंगे?" यों सुनाकर वह जाने को तैयार हो गई।

"अरी, जल्दी क्या है? आराम से जा सकती हो? लेकिन यह बताओ कि हमें शादी की दावत कब खिलाओगी?" सब पिशाचियों ने ज़ोर डाला।

जवान पिशाची ने थोड़ी देर तक सोच कर कहा–"अच्छी बात है! कल मैं तुम लोगों को दावत दूंगी। अंधेरा फैल जाने पर तुम सब मनुष्यों का रूप धरकर मेरे घर आ जाओ। तुम लोगों का परिचय मैं अपने पति से यह कहकर कराऊँगी कि तुम सब मेरी सखियाँ और मित्र हैं। आधी रात के वक़्त मेरे पति की आँख बचाकर हम दावत उड़ायेंगी।" यों सुनाकर वह फिर मानव युवती के रूप में बदल गई और अपने घर चली गई।

दूसरे दिन संध्या के समय सब पिशाचियाँ युवतियों के रूप धरकर जवान पिशाची के घर पहुँचीं और दर्वाजा खटखटाया।

जवान पिशाची ने भोली बनकर दर्वाज़ा खोलते कहा–"अरे, तुम सब एक साथ आ गईं?" यों आश्चर्य प्रकट करके अपने पति के साथ उनका परिचय कराया।

इसके बाद वह अपने पति से बोली– "आज रात को आप नीचे के कमरे में सो जाइये; मैं और मेरी सहेलियाँ छत पर के कमरों में सो जाएँगी।" इसके बाद सब छत पर चली गईं।

आधी रात होने को थी। अपने पति को गाढ़ निद्रा में निमग्न देख जवान पिशाची ने संतोष की सांस ली और जल्दी-जल्दी दावत का इंतज़ाम किया।

"इस मानव आकृति को ढोना हम से बन न पड़ेगा।" यों कहते सब पिशाचियों ने अपने वास्तविक रूप को धारण किया।

दावत का प्रबंध पूरा हो गया। सभी पिशाचियाँ केश बिखेरे तालियाँ बजाते कोलाहल पूर्वक नृत्य करने लगीं। इसके बाद सब दावत खाने बैठ गईं।

"हमारे इस शोरगुल को सुनकर अगर तुम्हारा पति जाग पड़ा तो हमारी हड्डी-पसली टूटेगी। इसलिए अच्छा यह होगा कि तुम एक बार नीचे जाकर देख आओ।" एक वृद्ध पिशाची ने जवान पिशाची को सलाह दी।

जवान पिशाची उठकर सीढ़ियों तक पहुँची, अचानक चीख उठी। नीचे के कमरे में लगभग तीस मर्द पिशाच नृत्य कर रहे थे। दावत की तैयारी भी हो चुकी थी।

तब जाकर जवान पिशाची ने समझ लिया कि उसने अपने जैसे एक जवान मर्द पिशाच के साथ ही शादी की है। इस पर वह क्रोध में आ गई, सभी पिशाचियों को इकट्ठा करके नृत्य करनेवाले मर्द पिशाचों पर एक साथ टूट पड़ीं।

इस पर सब पिशाचों ने चिल्लाते, खरोंचते, भयंकर काँड मचाया और शादी की दावत खाये बिना अपने निवास को चली गईं। इसके बाद जवान पिशाची ने कभी अपनी शादी की बात न उठाई।

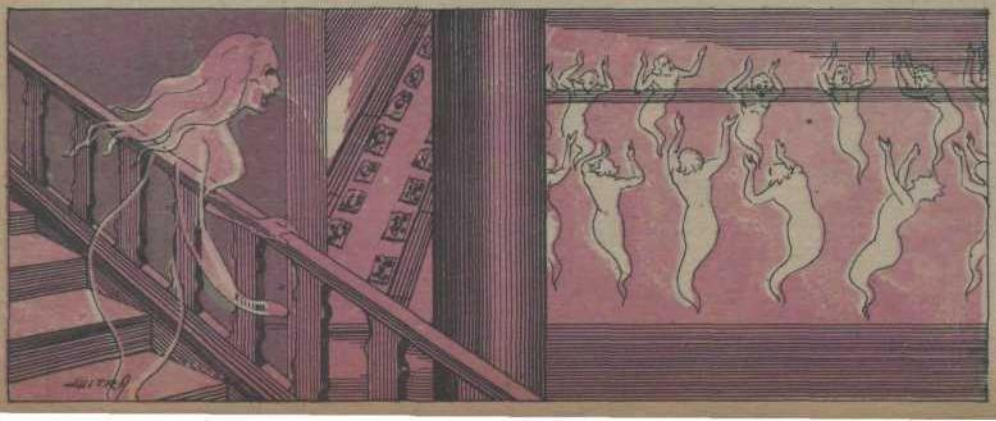

१६४. नील नदी का स्त्रोत

सात हजार वर्ष पूर्व मिस्त्र की सभ्यता का कारणभूत नील नदी विकटोरिया झील में पैदा होकर पहाड़ों के बीच में बहते अल्बर्ट सरोवर में गिर जाती है। अल्बर्ट सरोवर के प्रदेश का जाल प्रपात इस चित्र में हमें दिखाई देता है।

राज्य का बंटवारा

कन्यापूर का राजा सुपर्ण था। विवाह के बीस साल बाद भी जब उसे कोई संतान न हुई तब वह गहरी चिंता में डूब गया।

एक दिन राजमहल में एक मुनि आया। राजा ने मुनि के समक्ष अपना दुख प्रकट किया। इस पर मुनि ने समझाया–"राजन, यदि तुम भगवान विष्णु के वाहन गरुड की तपस्या करोगे तो तुम्हें संतान की प्राप्ति होगी।"

राजा सुपर्ण ने पहाड़ पर जाकर गरुड के प्रति घोर तपस्या की। एक सप्ताह बाद गरुड़ ने राजा के सम्मुख प्रत्यक्ष होकर बताया–"वत्स! मैं तुम्हारी भक्ति पर प्रसन्न हूँ! मांगो, तुम कैसा वर चाहते हो?"

"महात्मा! मेरे कोई संतान नहीं है। इस लिए मुझे संतान-प्राप्ति का वरदान दीजिए।" राजा सुपर्ण ने गरुड़ से निवेदन किया।

गरुड ने राजा के हाथ एक फल देकर समझाया–"तुम इसे अपनी पत्नी को खिलाओ। वह गर्भवती होकर जिस किसी भी चीज़ को जन्म दे, उसे तुम्हें छुये बिना वैसे ही रखना चाहिए।"

उस फल को खाने पर रानी गर्भवती हो गई। दस महीने बाद उसने एक अण्डे का जन्म दिया। वह बतख के अण्डे जैसे बड़ा था। उसे ज़मीन पर वैसे ही छुए बिना रहने दिया गया। वह दिन प्रति दिन बढ़ता गया।

इस प्रकार अनेक वर्ष बीत गये। एक दिन अचानक राजा सुपर्ण का स्वर्गवास हो गया। तब तक अण्डा काफी बड़ा हो चुका था। सुपर्ण की मृत्यु के छे दिन बाद अचानक अण्डा फूट पड़ा और उस में

ए. सी. सरकार, जादूगर

से दो सुंदर युवक राजोचित वस्त्र पहने बाहर निकल आये। एक नीले वस्त्र धारण किये हुए था और दूसरा लाल वस्त्र पहने हुए था।

"हम राजा सुपर्ण के पुत्र हैं।" दोनों युवकों ने कहा।

"मेरा नाम नीलकुमार है!" नीले वस्त्र धारण किये हुए युवक ने कहा।

"मेरा नाम रक्तकुमार है!" नील वस्त्र पहने युवक ने बताया।

महामंत्री ने रानी को साथ ले आकर उन युवकों का स्वागत किया।

"हम दोनों इस राज्य के वारिस हैं। इसलिए यह राज्य हमें सौंप दीजिए।" दोनों ने एक साथ कहा। दोनों का जन्म भी एक साथ हुआ था, इसलिए राज्य पाने की उनकी योग्यता समान थी।

"राज्य तो एक ही है, एक ही सिंहासन है। ऐसी हालत में दोनों एक ही समय में शासन कैसे कर सकते हैं?" मंत्री ने पूछा।

"राज्य के दो समान भाग कीजिए। हम दोनों एक एक भाग पर शासन करेंगे। बस, आपकी समस्या हल हो जाएगी।" राजकुमारों ने बताया।

"पहले से ही यह राज्य छोटा है, इसलिए राज्य का बँटवारा करना शायद जनता पसंद न करे।" मंत्री ने अपना संदेह प्रकट किया।

"जनता की इच्छा और अनिच्छा से हमें क्या मतलब है? हम दोनों राजा

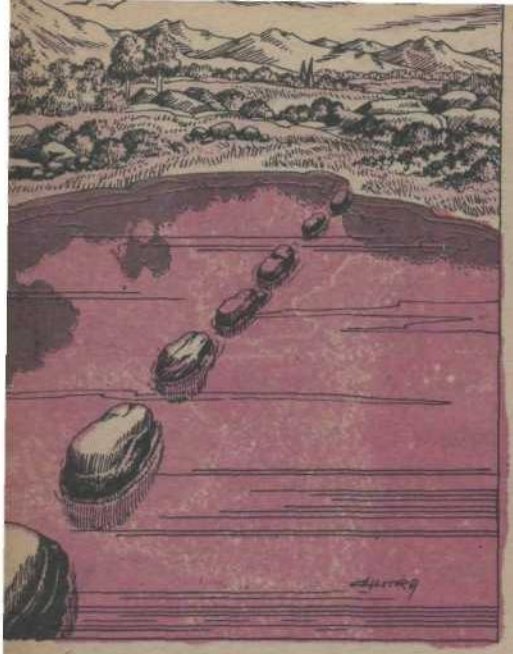

बनना चाहते हैं! बस, हमारी इच्छा पूरी होनी चाहिए। क्यों नीलकुमार! तुम्हारा क्या विचार है?" रक्तकुमार ने नीलकुमार से पूछा।

"हाँ, तुम ठीक कहते हो!" नीलकुमार ने रक्तकुमार का समर्थन किया।

"ऐसी बात हो तो सारा प्रबंध करने के लिए हमें कम से कम तीन महीने की अवधि दीजिए!" मंत्री ने पूछा।

"अच्छी बात है! पर फिलहाल हमारे रहने के लिए अलग-अलग महलों का प्रबंध कीजिए।" राजकुमारों ने कहा।

मंत्री ने दोनों राजकुमारों के लिए दो महलों का प्रबंध किया, तब अपने अनुचरों से इस बात पर परामर्श करने लगा कि राज्य को कैसे बांटा जाय!

"राज्य का बंटवारा किसी न किसी रूप में हो सकता है, मगर जीवन सरोवर को कैसे बांटा जाय?" एक उपमंत्री ने सवाल किया।

उस राज्य की उत्तरी सीमा पर एक सुंदर सरोवर पूर्व और पश्चिम की ओर फैला हुआ था। उसके मध्य भाग में उत्तर-दक्षिण पत्थरों के ढेर इस तरह लगे थे, मानो उस पर बांध बनाये गये हो! मगर उनके बीच सौ गज तक खाली जगह थी। उसको पत्थरों से भर दिया जाय तो सरोवर दो भागों में विभक्त हो जाएगा।

मगर इस प्रकार दो सरोवर बनाने में एक बहुत बड़ा खतरा था। उस जीवन सरोवर के दोनों छोरों पर निचले भाग में पानी के दो स्त्रोत थे। उनके द्वारा सरोवर में बहनेवाले धातुलवण ज़हरीले थे। मगर इस समय सारा पानी एक ही स्त्रोत बना हुआ था। इस कारण वे ज़हरीले लवण एक दूसरे के गुणों को आत्मसात करके सरोवर के पानी को जनता के लिए जीवनोपयोगी बनाये हुए थे। अब यदि उस सरोवर के दो भाग किये जाय तो दोनों भाग ज़हरीले हो

सकते हैं। जनता के प्राणों के लिए खतरा पैदा हो सकता है। उस पानी के द्वारा न केवल मनुष्य बल्कि जानवर और पेड़ भी मर सकते हैं। जाड़े के मौसम में एक महीने पर्यंत सरोवर का पानी जम जाता है! इसलिए जनता जाड़े के पहले ही पानी इकट्ठा करके बर्फ़ के पिघलने तक उसका उपयोग किया करती है।

जाड़े का मौसम निकट था। प्रधान मंत्री ने राजकुमारों के पास जाकर सरोवर के बांटने से होनेवाले खतरे का आगाह किया। मगर राजकुमारों ने हठ किया कि किसी भी स्थिति में राज्य का बंटवारा होना ही चाहिए।

दो दिन की अवधि और मांगकर लौटते हुए प्रधान मंत्री ने महारानी के दर्शन किये।

"मंत्री महोदय, मैंने कभी न सोचा था कि मेरे गर्भ से ऐसे बच्चे पैदा होंगे। देश का विनाश करनेवाले बच्चों के जन्म देने की अपेक्षा मैं बांझ ही रह जाती तो अच्छा होता। मेरे ये दोनों बच्चे मर जाय तो कहीं अच्छा है!" यों कहते रानी ने दुख प्रकट किया।

"महारानीजी! मैं हमारे दरबारी जादूगर शंकरलाल से परामर्श करके इस बात की कोशिश करूँगा कि किसी भी हालत में जीवन सरोवर का बंटवारा न हो।" मंत्री ने समझाया।

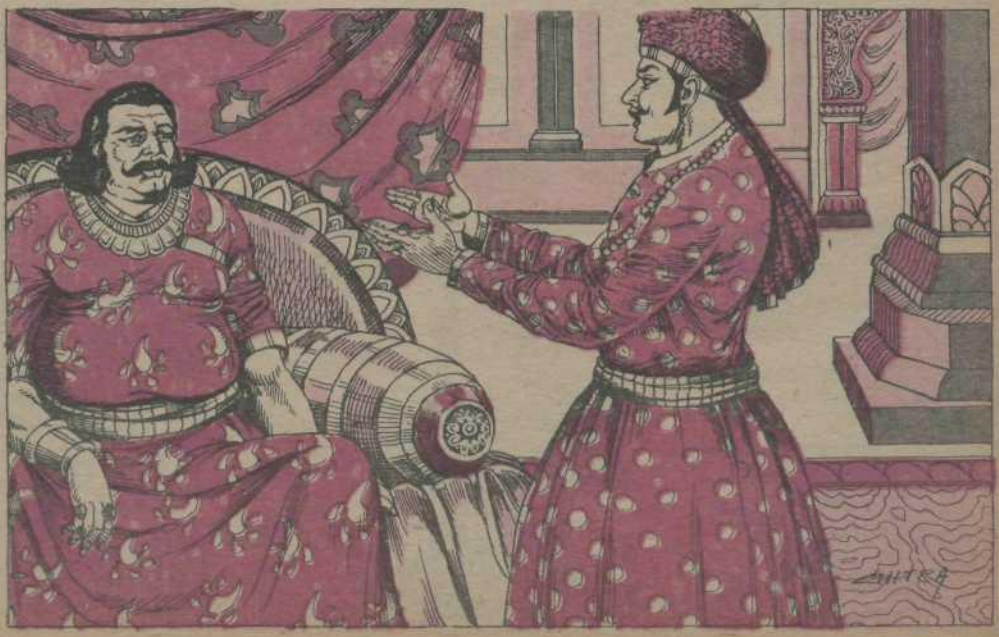

सर्दी तीव्र हो गई और सरोवर का पानी भी जम गया।

जादूगर की सलाह के अनुसार मंत्री महोदय नीलकुमार तथा रक्तकुमार को सरोवर के निकट ले गया। उसने कुल्हाड़ी से सरोवर के मध्य भाग में बर्फ़ की एक चट्टान को काट डाला और उसको राजमहल में ले आया। उसे औंधे मुंह रखे हुए गिलासों पर रखकर उसके चारों ओर पतले तार को लपेट दिया और एक भारी बोझ उससे लटका दिया।

इसके उपरांत उसने राजकुमारों से कहा–"राजकुमार! ध्यान से देखो। नीचे जो बोझ है, उसकी वजह से यह तार बर्फ़ की चट्टान को दो टुकड़ों में काट रहा है। यदि सरोवर को दो भागों में बांटना ईश्वर का संकल्प हो तो बर्फ़ की चट्टान दो टुकड़ों में कट जाएगी। यदि सरोवर का विभाजन करना ईश्वर का संकल्प न हो, तो बर्फ़ की चट्टान को तार के द्वारा दो टुकड़ों में काटने पर भी वह अविकल बनी रहेगी।"

यों वह कह ही रहा था कि तार ने बर्फ़ की चट्टान के आधे भाग को काट डाला, फिर थोड़ी देर उपरांत निचले स्तर तक बर्फ़ की चट्टान को काटकर नीचे गिर गया। मगर बर्फ़ की चट्टान पूर्ववत् बनी रही।

"देखते हो न राजकुमार! सरोवर को दो भागों में विभक्त करना ईश्वर का संकल्प नहीं है!" मंत्री ने समझाया।

"राज्य का बंटवारा करना भी ईश्वर का संकल्प नहीं है। हमने केवल आप की बुद्धिमत्ता की परीक्षा ली। बस! राज्य एक ही बना रहेगा। हम भी एक बने रहेंगे। आप लोग देखते रहिए।" यों कहते रक्तकुमार नीलकुमार में विलीन हो गया।

नीलकुमार ने अपनी माता के निकट जाकर उसके चरणों में प्रणाम किया।

"नीलकुमार की जय!" सब लोगों ने नारे लगाये।

दान-पत्र

वह रमज़ान का त्योहार था। गोलकोंडा का नवाब नये वस्त्र धारणकर बड़ी खुशी के साथ अल्लाह की प्रार्थना करने ईदगाह की ओर चल पड़ा।

चन्नदास नामक जुलाहे ने उस वर्ष कलबत्तूवाली जो पगड़ी बुनी थी, उसे लाकर नवाब को दे दी। चमकनेवाली उस पगड़ी को ओढ़कर नवाब ने आईने में एक बार देखा और मन ही मन बहुत खुश हुआ। सदल-बल नवाब ईदगाह में गया, रास्ते में सबके मुंह से कलाबत्तूवाली पगड़ी की तारीफ़ सुनी। ईदगाह से लौटते हुए नवाब ने चन्नदास को बुला भेजा और पूछा–"कारीगर, बताओ, इस पगड़ी की क़ीमत क्या है?"

"सरकार! दिन-रात मेहनत करके मैं ने आप ही के वास्ते यह पगड़ी बुनी है। उसका मूल्य मेरे द्वारा निर्णय करना आपकी उदारता का मूल्यांकन करना होगा। आप ही कोई ऐसा निर्णय कीजिए जिससे आप के द्वारा प्राप्त संपत्ति का अनुभव करते हमेशा मैं आपकी याद किया करूं?" चन्नदास ने नम्रता पूर्वक जवाब दिया।

"तुम अपने मन की बात स्पष्ट बता दो। हमारी खुशी का तुम्हें पता चल जाएगा।" नवाब ने मूंछों पर ताव देते हुए कहा।

"मैं परिवार वाला आदमी हूँ, तिसपर गरीब हूँ। दाने-दाने के लिए तरस रहा हूँ। मेरी मेहनत से पेट भर नहीं रहा है। इसलिए थोड़ी-सी ज़मीन दान में दिला दीजिए। बीबी व बाल-बच्चे का पेट भरेगा।" चन्नदास ने कहा।

"अच्छी बात है! दीवानजी! इसी के गाँव में कोई बढ़िया ज़मीन देख दान-पत्र लिख लाइये।" नवाब ने हुक्म दिया।

महेन्द्र कुमार

दीवान दान-पत्र लिखकर ले आया। नवाब ने उस पत्र पर अपने हस्ताक्षर करके चन्नदास के हाथ में देते हुए कहा– "सुनो, इसे तुम अपने गाँव के मुखिये को दिखा कर ज़मीन पर कब्ज़ा कर लो।"

चन्नदास बहुत खुश हुआ। गाँव पहुंच कर गाँव के मुखिये दीनू महतो को नवाब का हुक्म-पत्र दिखा दिया। महतो ने पत्र को देख दूसरे दिन मिलने को कहा।

चन्नदास के चले जानेपर महतो ने गिरिधर को बुला भेजा और चन्नदास के दान-पत्र की बात बताई।

गिरधर को चन्नदास पर गुस्सा आ गया। उसने कहा–"मैं जिस ज़मीन को जोत रहा हूँ, उसपर चन्नदास की नज़र पड़ गई। मैं देखूंगा कि उस ज़मीन को कौन जोतेगा?"

"भाई साहब! तुम्हारे नाराज़ हो जाने से फ़ायदा ही क्या? चन्नदास नवाब के यहाँ से दान-पत्र ले आया है। नवाब के हुक्म के आगे हम कर ही क्या सकते हैं?" महतो ने समझाया।

"तो क्या इस वास्ते मैं जमीन से हाथ धो बैठूंगा? यह तो मेरे लिए अपमान की बात होगी! मैं देखूंगा कि चन्नदास मेरी जमीन में क़दम कैसे रख सकता है?" गिरिधर ने अपना गुस्सा उतारा।

"गिरिधर! तुम्हारे नाराज़ हो जाने से कोई फ़ायदा नहीं। वह तो सरकार की जमीन है!" महतो ने असली बात बताई।

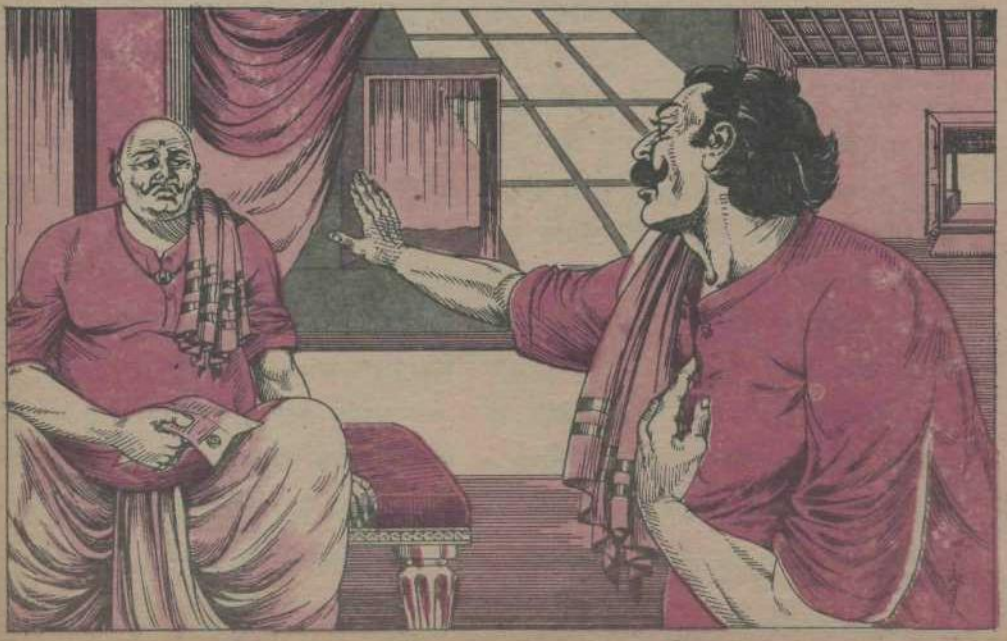

इसपर गिरिधर थोड़ा शांत हो गया। उसने महतो से निवेदन किया कि इसका कोई उपाय सोचे। दोनों विचार करने लगे। उसी वक़्त महतो का नौकर खाली बर्तन ले आ पहुँचा और बोला–"मालिक! भैंस ने आज दूध नहीं दिया। शायद वह गाभिन हो गई है!"

तब गिरिधर ने महतो को समझाया–"आप कोई चिंता न करे, मैं दुधारू भैंस भिजवा दूंगा।"

गिरिधर की बातें सुन महतो बड़ा खुश हुआ, ज़मीन हड़पने का उसे कोई उपाय बताया। और महतो को प्रणाम करके चला गया। रास्ते में उसे चन्नदास दिखाई पड़ा। गिरिधर उसे क्रोध भरी दृष्टि से देख अपने रास्ते चला गया। चन्नदास संदेह करते हुए महतो के घर पहुँचा। महतो ने उसे समझाया–"सुनो चन्नदास! तुम नाहक़ क्यों गिरिधर से दुश्मनी मोल रहे हो? तुम तो न ज़मीन जोतोगे और न फ़सल ही पैदा करोगे? तुम चाहो तो मैं गिरिधर से थोड़ा-बहुत हर्जाना दिला दूंगा।"

महतो के मुँह से ये बातें सुन चन्नदास मन ही मन बड़ा दुखी हुआ। उसने सुन रखा था कि महतो घूसखोर है, अब उसे मालूम हो गया कि लोगों का कहना सच है। चन्नदास चुपचाप वहाँ से चला।

रास्ते में उसने देखा कि गिरिधर का साथी भैंस को हांकते चला जा रहा है।

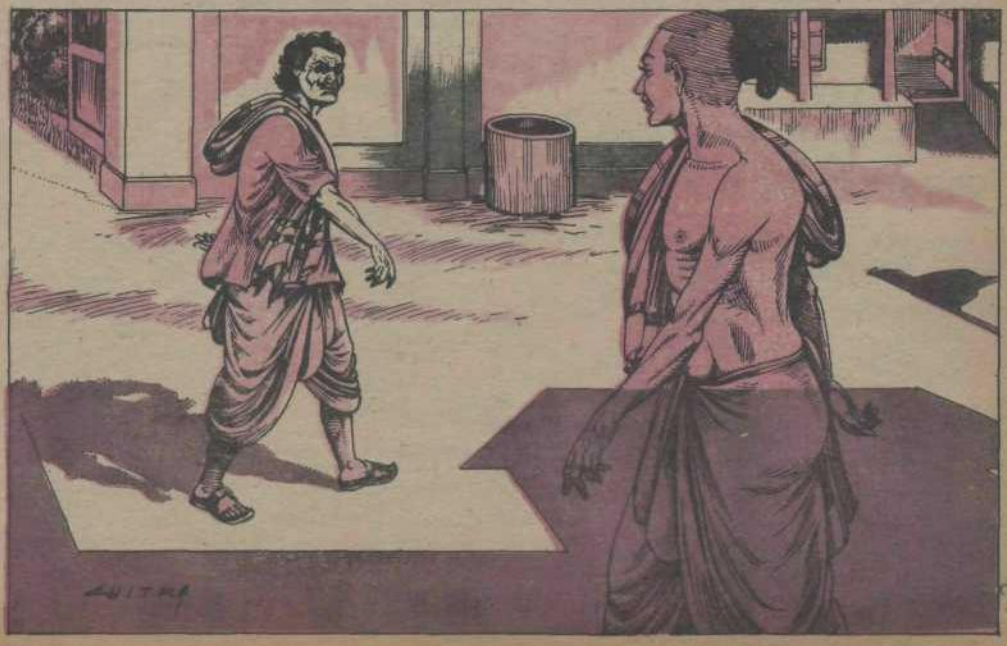

चन्नदास ने पूछा–"भाई, इस भैंस को कहाँ हांके ले जा रहे हो?"

"गिरिधर ने महतो के घर बाँध आने को बताया है।" गिरिधर के साथी ने जवाब दिया।

इसके बाद महतो तथा गिरिधर ने चन्नदास को डराया, पीटा और चन्नदास से इस आशय का दस्तावेज लिखाया कि उसने वह ज़मीन गिरिधर को बेच दी है।

पुनः रमज़ान त्योहार निकट आया। त्योहार के सिर्फ़ दो दिन रह गये थे। नवाब को ज़रीदार पगड़ी की याद आई। उसने चन्नदास को बुला भेजा। चन्नदास को खाली हाथ लौटे देख नवाब ने पूछा–"क्या तुमने इस साल पगड़ी नहीं बुनी?"

"अगर आप मुझपर नाराज़ न हो जावे तो मैं आप से असली बात निवेदन करूंगा। हुज़ूर! मेरी मेहनत का फल हाथ न लगा।" चन्नदास ने कहा।

"अरे, तुम तो बड़े ही महत्वाकांक्षी मालूम होते हो! मैंने जो ज़मीन दी, क्या वह तुम्हारी पगड़ी के मूल्य की बराबर नहीं?" नवाब ने अचरज में आकर पूछा।

"हुज़ूर! मेरा मतलब यह नहीं! पगड़ी को भैंस ने चर डाला है। ज़मीन मेरे हाथ से निकल गई है!" चन्नदास ने कहा।

"क्या कहा? ज़मीन तुम्हारे हाथ से निकल गई? मेरे हुक्म का पालन नहीं हुआ?" नवाब ने गुस्से में आकर पूछा।

चन्नदास ने सारी बातें सविस्तार कह सुनाईं। नवाब ने उसी वक़्त महतो तथा गिरिधर को बुलावा भेजा। बख्शीस लेने के अपराध में महतो को नौकरी से हटाया, बख्शीस देने के अपराध में गिरिधर को सौ रुपये जुर्माना लगाया और ज़मीन चन्नदास को वापस दिलाई।

उस दिन से चन्नदास ने ज़मीन जोतकर फ़सल पैदा करना शुरू किया और अपनी बीबी व बच्चों के साथ आराम से दिन बिताने लगा। वह हर साल एक पगड़ी बुनकर नवाब को भेंट देता और बढ़िया इनाम पाता रहा।

बात की रीत

रामशर्मा वैद्यशास्त्र में प्रवीण तो बन गया, पर यह पेशा उसके अनुकूल नहीं पड़ा। आख़िर इस पेशे से अपना पेट भरना भी रामशर्मा के लिए दूभर बन गया।

एक दिन रामशर्मा ने अपने एक मित्र, जो ज्योतिषी था, के यहाँ जाकर निवेदन किया कि मेरी जन्मकुंडली में कोई त्रुटि हो तो बता दे–"मैं सभी बीमारियों का सही ढंग से इलाज करता हूँ। फिर भी गाँववालों का मुझ पर विश्वास जम नहीं रहा है।"

"भाई, दोष तुम्हारी जन्मकुंडली का नहीं है। तुम्हारी वाणी का है। मैंने तुम्हारे बारे में काफ़ी बातें सुन रखी हैं। तुम मरीज़ों को डरा देते हो। तुम एक महीने पर्यंत मौन व्रत धारण करके मेरे पीछे चलो। तब देखो, क्या होता है!" ज्योतिषी ने समझाया।

रामशर्मा ने ऐसा ही किया। वह प्रति दिन ज्योतिषी को साथ लेकर मरीज़ों को देखने जाता रहा। ज्योतिषी मरीज़ों से सवाल करके उन्हें ढाढ़स बंधा देता, रामशर्मा दवाइयाँ देता; बीमार लोग चंगे हो जाते।

एक महीने के अन्दर रामशर्मा का नाम चारों ओर फैल गया। इस बीच उसने यह सीख़ लिया कि मरीज़ों के साथ कैसे पेश आना चाहिए!

दो डाकू

एक शहर में सोमभद्र नामक एक जौहरी था। ग्राहकों को दगा दिये बिना ही उसने लाखों रुपये कमाये। उस में कोई ऐसा बुरा गुण न था, जिस की ओर उंगली उठाया जा सके। जितनी मात्रा में सोमभद्र ने धन कमाया, उतनी ही मात्रा में वह दान भी देकर यशस्वी हो गया।

उसी शहर में दो डाकू थे; जो दिन दहाड़े चोरियाँ करते थे। दिन में ही वेष बदल कर वे युक्ति पूर्वक लोगों को धोखा देते थे। उनके बारे में सब लोग जानते थे, पर उनके अपराधों को साबित कर दिखाना किसी के लिए संभव न था। आखिर उसकी नज़र सोमभद्र पर पड़ी।

डाकुओं में से एक ने ज्योतिषी का वेष धारण किया, एक दिन सोमभद्र के घर जाकर उसका आतिथ्य स्वीकार किया, उसने सविस्तार यह सब बताया कि आज तक सोमभद्र के जीवन में क्या क्या बीता है। सारी बातें सुनकर सोमभद्र ने पूछा–"महाशय, आपने मेरे जीवन में गुजरी हुई सारी बातें साफ़-साफ़ बता दीं। ज्योतिष में आप पहुँचे हुए विद्वान मालूम होते हैं, मगर मेरे जीवन में जो बीतनेवाला है, भविष्य भी कृपया बता दीजिए!"

"शीघ्र ही आपके घर एक महानुभाव आनेवाले हैं। उनकी कृपा से आप की संपत्ति दस गुने बढ़नेवाली है।" ज्योतिषी के रूप में स्थित डाकू ने बताया।

सोमभद्र ने उस ज्योतिषी को पुरस्कार देकर विदा करना चाहा, पर ज्योतिषी ने उसे स्वीकार नहीं किया। उसने अपने मन में सोचा कि पुरस्कार ग्रहण न करने पर सोमभद्र का विश्वास जम जाएगा।

एक सप्ताह बीत गया। एक दिन मूसलधार वर्षा हो रही थी। उस वक़्त

भँवरलाल

बड़ा डाकू योगी का वेष धारण कर छोटे डाकू को अपने शिष्य बनाये सोमभद्र के बरामदे में आ खड़ा हुआ। इसके थोड़ी देर बाद दर्वाज़े पर दस्तक देने की आवाज़ सुनकर सोमभद्र ने किवाड़ खोल दिये।

बड़े डाकू ने सोमभद्र से पूछा–"बेटा, ज़ोर की वर्षा हो रही है। क्या आज रात को हमें तुम्हारे घर आश्रय दे सकते हो?"

"क्यों नहीं? यह घर तो आप ही लोगों का है। अन्दर पधारिये।" सोमभद्र ने कहा।

इसके बाद सोमभद्र ने दोनों डाकुओं के भोजन का प्रबंध किया। खाने के बाद छोटे डाकू ने सोमभद्र से कहा–"हमारे गुरुदेव ने अपने तपोबल से सुवर्ण योग को प्राप्त कर लिया है। वे चाहे तो एक स्वर्णमुद्रा को दस स्वर्णमुद्राएँ बना सकते हैं! कल आपको इसका परिचय देंगे।"

सोमभद्र ने बड़े डाकू से निवेदन किया–"महात्मा! आपके संबंध में एक सप्ताह पूर्व एक ज्योतिषी ने मेरे घर आकर सारा वृत्तांत सुनाया है। आज आप स्वयं पधारे हैं। मैं धन्य हो गया हूँ।"

उस दिन रात को सोमभद्र ने दोनों डाकुओं के आराम करने के लिए एक कमरा दिया, जब वे कमरे के अन्दर चले गये, तब सोमभद्र ने बाहर से दर्वाज़े पर कुंडी चढ़ा दी। अर्द्ध रात्रि के समय डाकुओं ने सोमभद्र का घर लूटना चाहा,

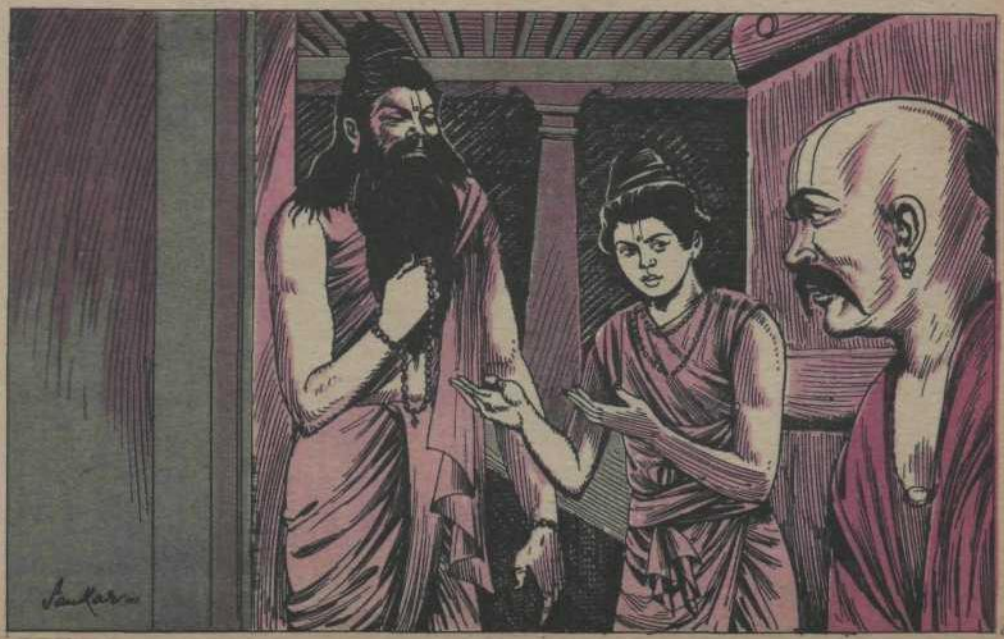

मगर बाहर कुंडी लगा दी गई थी इसलिए संभव न हुआ।

दूसरे दिन सवेरा होने के पहले ही सोमभद्र ने अपने सारे नौकरों को समझाया कि उन्हें क्या क्या करना है, तब डाकुओं वाले कमरे की कुंडी खुलवा दी।

सवेरा होने पर डाकू सोमभद्र को पिछवाड़े में ले गये, वहाँ पर अग्निहोत्र करके एक छोटा सा यज्ञ शुरू किया। बड़ा डाकू कोई मंत्र पढ़ रहा था, छोटे ने सोमभद्र की ओर देख कहा–"महाशय, आप सौ स्वर्णमुद्राएँ लेते आइए।"

ज्यों ही सोमभद्र घर के अन्दर चला गया त्यों ही बड़े डाकू ने एक हज़ार स्वर्णमुद्राएँ निकाल कर मिट्टी में गाड़ दीं।

सोमभद्र ने सौ स्वर्णमुद्राएँ ला दीं। डाकू ने उन्हें भी उस प्रदेश में मिट्टी में गाड़ दीं, कोई मंत्र पढ़ा, तब एक हज़ार स्वर्णमुद्राओं वाली थैली निकाली।

सोमभद्र ने उस थैली को देखकर लौटाने का आश्वासन दिया, उसे अपने हाथ में लेकर कहा–"वाह! आपकी शक्ति अद्भुत है! लेकिन मैं सोने के प्रति ज्यादा लोभ रखनेवाला व्यक्ति नहीं हूँ। फिलहाल मेरे लिए ये हज़ार स्वर्णमुद्राएँ पर्याप्त हैं।"

डाकुओं ने सोचा कि सोमभद्र उस अद्भुत को देख अपना सारा सोना उन्हें दे देगा, पर उसके इस व्यवहार को देखने पर उन्हें लगा कि वह उन्हीं को बेवकूफ़ बना रहा है! तब दोनों ने इशारा करके अचानक सोमभद्र पर आक्रमण किया; परंतु इस बीच पेड़ों की ओट में से निकल कर राजभट आ धमके और दोनों डाकुओं को बन्दी बनाया।

इसके बाद सोमभद्र ने उन डाकुओं से कहा–"जैसे तुम लोग समझते हो, वैसा मैं भोला आदमी नहीं हूँ। तुम लोगों ने भोले व्यक्तियों को दगा देकर सोचा कि सारे लोग भोले हैं। चलो अदालत में।"

राजा ने डाकुओं को कठोर दण्ड दिया और सोमभद्र का सत्कार किया।

सन्यास का चस्का

रामनारायण अपनी पत्नी तथा दो बच्चों के साथ सुखी था। मगर अचानक उसके मन में सन्यासी बन जाने की इच्छा पैदा हुई। पत्नी ने अनेक प्रकार से समझाया कि उन्हें छोड़ कर चले न जावे, पर रामनारायण ने उसकी एक न सुनी।

"सान्यास लेने की योग्यता सब में नहीं होती; तुम्हारे बच्चे भी बहुत छोटे हैं। इसलिए सन्यास मत लो।" कई लोगों ने समझाया, फिर भी रामनारायण ने अपना हठ न छोड़ा।

एक दिन सवेरे रामनारायण घर से चलने को तैयार हुआ, तब उसकी पत्नी ने कहा—"रास्ते में भूख लगेगी, थोड़ा-सा बासी भात बांध के देती हूँ, लेते चलो।"

रामनारायण भात लेकर चल पड़ा। भूख लगी तो एक पेड़ की छाया में पहुँच कर खाने की पोटली खोल दी तो देखता क्या है, उस में भूसा भरा था! रामनारायण को अपनी पत्नी पर बड़ा गुस्सा आया, उसने घर लौट कर अपनी पत्नी को डाँटा।

"सन्यासी के मन में पारिवारिक बंधन तथा कामनाएँ नहीं होना चाहिए। उस में तो आत्म निग्रह होना चाहिए।" पत्नी ने समझाया। फिर क्या था, रामनारायण ने सन्यास लेने की अपनी इच्छा त्याग दी।

ज्ञानोदय

एक जमाने में धारा नगर पर राजा शूरसेन शासन करता था। हर छोटी सी बात में अपना बड़प्पन दिखाने की उसकी तीव्र लालसा थी। उसका यह भी विचार था कि राज्य भर में उसके आधिपत्य के बिना छोटा सा कार्य भी संपन्न न हो!

उसी राज्य में आनंद नामक एक शिवभक्त था। वह गरीबों तथा अनाथों की यथा शक्ति सहायता करते लोकप्रिय बन चुका था। उसके मन में एक शिवाला बनाने की इच्छा जागृत हुई। उसने लोगों से चन्दा वसूल करके शिवजी के लिए आखिर एक मंदिर बनवाया।

मंदिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा कराने की बात उठी। तब यह समस्या उत्पन्न हो गई कि ईश्वर की प्रथम पूजा कौन करे? वैसे मंदिर छोटा था। उसके निर्माण में बड़ी रक़म दान देनेवाले तथा शिवभक्तों की संख्या भी कम न थी। फिर भी आनंद ने सोचा कि ऐसे मामलों में राजा हठ प्रदर्शित करते हैं। प्रथम पूजा राजा के द्वारा ही करावे तो उचित होगा। अन्यथा वे नाराज़ हो सकते हैं। इस विचार के आते ही आनंद राजा शूरसेन की सेवा में पहुँचा और प्रार्थना की–"महाराज! मैंने शिवजी के लिए एक मंदिर बनवाया है। उस में प्रथम पूजा आप ही के द्वारा कराने के ख्याल से आया हूँ।"

राजा बहुत प्रसन्न हुआ और पूछा–"अच्छी बात है! पर यह बताओ कि तुम किस दिन पूजा कराना चाहते हो? हमें कब मंदिर में आना होगा?"

"कल ठीक आठ बजे आप को मंदिर में उपस्थित रहना होगा। मूर्ति की प्रतिष्ठा तभी होगी। आप उस समय पहुंचेंगे तो

सुरेश भारती

प्रथम पूजा आप ही के द्वारा संपन्न होगी।" आनंद ने कहा।

"हम अवश्य समय पर आ जायेंगे।" राजा ने आश्वासन दिया।

दूसरे दिन आठ बजे तक प्रथम पूजा की सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं। लोग बड़ी उत्सुकता के साथ राजा के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। पर राजा समय पर न आया।

आनंद ने बड़ी देर तक राजा का इंतज़ार किया। शुभ मुहूर्त की घड़ी का बीत जाना अमंगल मानकर आनंद ने स्वयं प्रथम पूजा प्रारंभ की और अन्य लोगों के साथ पूजा कराने लगा। राजा इस विचार से जान-बूझकर देरी से आया कि देखें, लोग किस प्रकार उत्सुकता पूर्वक उसका इंतज़ार करते हैं। राजा ने वहाँ पहुँचकर देखा, तब तक कई नगरवासी अपनी पूजा समाप्त कर चले गये थे।

राजा को जब यह समाचार मालूम हुआ, तब उसका क्रोध भड़क उठा। उसने गरजकर पूछा–"इस मंदिर में प्रथम पूजा किसने की?"

"महाराज, क्षमा कीजिए? मुहूर्त के समाप्त होते देख मैंने समझा कि उसके बाद प्रथम पूजा करना मंदिर के लिए अशुभ होगा। इसलिए मैंने ही प्रथम पूजा की।" आनंद ने नम्रतापूर्वक कहा।

"अरे नीच! मुझको प्रथम पूजा करने के लिए निमंत्रण देकर मेरा अपमान करते

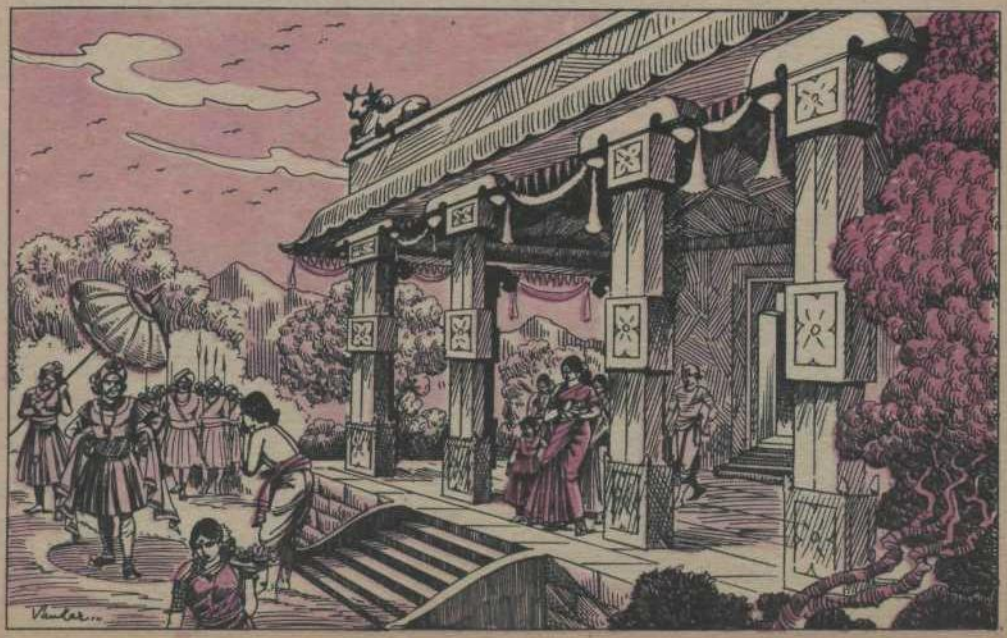

हो?" इन शब्दों के साथ अपने सेवकों को लक्ष्य करके आदेश दिया–"इसी मंदिर के आगे आनंद को फाँसी पर चढ़ा दो।"

दूसरे ही क्षण मंदिर के गर्भगृह से ये शब्द सुनाई दिये–"अरे मूर्ख! मेरे मंदिर के सामने मेरे भक्त को फाँसी पर चढ़ाओगे? तुम अपनी दुष्टबुद्धि के कारण लोगों को सता रहे हो। याद रखो, मैं तुम्हें और तुम्हारे वंश का सर्वनाश करूँगा।"

लोगों ने यह वाणी सुनकर सोचा कि ईश्वर राजा पर नाराज़ हो गये हैं।

राजा ने काँपते स्वर में कहा–"भगवान, मेरा अपराध क्षमा कीजिए! आइंदा मैं लोगों को कष्ट न दूंगा।"

इसके बाद फिर मंदिर के भीतर से यह वाणी सुनाई दी: "शूरसेन! तुम्हारे बड़प्पन को लोग खुद स्वीकार करें, पर तुम्हें अपने बड़प्पन का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए। आज से तुम प्रति नित्य मेरा ध्यान करो। तुम्हें और तुम्हारे राज्य का शुभ होगा!"

इसके बाद नम्रता पूर्वक शूरसेन अपनी पूजा समाप्त कर राजमहल को लौट पड़ा।

आनंद को यह सब आश्चर्यजनक प्रतीत हुआ। सब लोगों के चले जाने के बाद उसने गर्भगृह में प्रवेश करके देखा। लिंग की आधार शिला के पीछे से उसका शिष्य मुस्कुराते बाहर आया। उसने अपने गुरु आनंद से कहा–"आपने जब प्रथम पूजा की, तभी मैंने अनुमान लगाया कि राजा आप को अवश्य दण्ड देंगे। इसीलिए मैंने यह नाटक रचा। आखिर राजा के मन में किसी न किसी को ज्ञानोदय पैदा करना है न?"

आनंद पल भर चकित रहा, फिर अपने शिष्य का आलिंगन करके बोला–"हाँ, बेटा, तुमने करके दिखाया।"

उस दिन से शूरसेन ने हर कार्य में आगे आने की बात छोड़ दी और जनता पर अपनी संतान की तरह शासन करने लगा।

अकाल की दर

एक गाँव की सारी खेती तालाब के पानी पर निर्भर थी। उस गाँव में धन्नासेठ नामक एक व्यापारी था। गाँव के खेत व बगीचों में से आधे उसी के थे।

एक वर्ष बिलकुल बरसात न हुई। फलतः सारे तालाब सूख गये। इसलिए रोपाई न हुई। धन्नासेठ ने अपना सारा अनाज ऊँचे भाव पर बेच दिया। उसका अनाज भी समाप्त हो गया।

धन्नासेठ के गाँव के तालाब के तले में थोड़ा पानी रह गया था। न वह पानी नहरों में बहाया जा सकता था और न खेतों को सींचा जा सकता था। धन्नासेठ उस पानी को पीपों में ले जाकर अपने आम के बगीचे को बचा पाया, जिससे उस साल खूब फल लगे।

जब अनाज न मिला तब गाँव के लोग आम खरीदकर पेट भरने के ख्याल से सेठ के बगीचे में आने लगे। सेठ ने एक-एक आम का दाम आधा रुपया बताया। पिछले साल उसी सेठ ने सौ आम दो रुपये में बचे थे। गाँववालों ने जब यह बात याद दिलाई तो उसने यही जवाब दिया—"अकाल की दरें ऐसी ही होती हैं।"

लेकिन गाँववालों के पास धन बिलकुल न था; जो कुछ था, उसे देकर उसी सेठ से अनाज खरीद लिया था।

"जिनके पास रुपये-पैसे नहीं, वे ऋण-पत्र लिखकर आम खरीदकर ले जाइए।" सेठ ने सुझाया। लोगों ने सोचा कि ऋण चुकाने की बात बाद को सोची जा सकती है, पहले भूख तो मिटा ले। सब ने ऋण-पत्र लिख कर सेठ के हाथ दिये, फल लेकर खा लिया। इस मौके से फ़ायदा उठाने के ख्याल से सेठ ने ऊँची दर ब्याज पर ऋण-पत्र लिखवा लिये।

दूसरे साल खूब वर्षा हुई। सभी तालाब भर गये और अकाल जाता रहा। फिर से खेत व बगीचे लहलहा उठे। मगर गाँव के किसानों को सेठ का पिंड न छूटा। खेत व बगीचों की आमदनी को सेठ ने अपने क़र्ज में चुकता करवा लिया। जिनके पास खेत न थे, उनसे बेगारी करवाने लगा।

आखिर सेठ से तंग आकर सबने मुखिये के यहाँ पहुँच करके बिनती की कि उन्हें सेठ के लूटने से बचावे। मुखिये ने सेठ को समझाया–"ये लोग ज़िंदगी भर तुम्हारे यहाँ बेगारी करे, तब भी तुम्हारा ऋण चुकनेवाला नहीं है। इसलिए थोड़े-बहुत रुपये लेकर इनके ऋण-पत्र वापस कर दो।"

पर सेठ ने मुखिये की बात नहीं मानी। "तब तो मुझे एक दूसरा खाता देखना पड़ेगा। जब गाँव के सभी लोगों के बगीचे सूख गये, तब तुम्हारा बगीचा कैसे फला-फूला? तुमने तालाब का पानी पीपे भर कर इस्तेमाल किया है न? इसलिए तुम्हीं इस गाँववालों के ऋणी बन गये हो!" मुखिये ने कहा।

"यह कैसे हो सकता है?" सेठ ने उल्टा सवाल किया।

"सुनो, गाँव का पानी सिर्फ़ तुम्हारी संपत्ति नहीं, वह गाँव के सभी निवासियों की संपत्ति है। इसलिए मैं एक पीपे का पानी दस रुपये के हिसाब से क़ीमत लगा कर हिसाब लगाऊँगा कि तुमने ग्रामवासियों से कितने मूल्य का पानी खरीद लिया है।" मुखिये ने समझाया।

"यह तो सरासर अन्याय है। क्या एक पीपे के पानी का मूल्य दस रुपये हो सकता है?" सेठ ने पूछा।

"अकाल की दरें कुछ ऐसी ही होती हैं!" मुखिये ने जवाब दिया।

आखिर सेठ ने ऋण के रूप में जो कुछ ग्रामवासियों से वसूल किया था, उसे लौट दिया और जिनसे बेगारी ली थी, उनकी मजूरी का हिसाब लगाकर सबके ऋण-पत्र फाड़कर फेंक दिये।

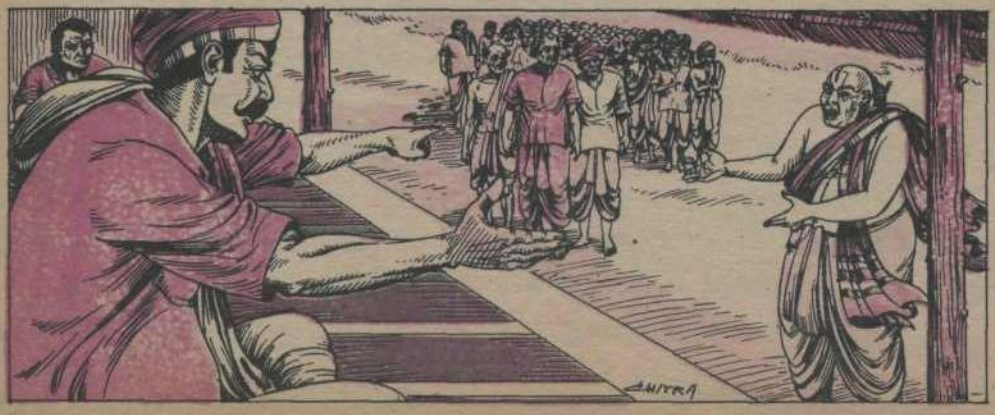

मैनाक के मुंह से आतिथ्य की बात सुनकर हनुमान अत्यंत प्रसन्न हुआ और बोला– "मेरे लिए तुम्हारी श्रद्धा भरी बातें ही आतिथ्य हैं। मैं तुम्हारे आतिथ्य को अस्वीकार कर रहा हूँ, इसलिए मुझ पर नाराज़ मत होओ! इस वक़्त मुझे विलंब नहीं करना है। मैं वचन दे आया हूँ कि शाम के अन्दर मैं सीधे लंका में पहुँच जाऊँगा। मार्ग मध्य में मुझको कहीं रुकना नहीं चाहिए।"

यों समझाकर हनुमान ने अपने हाथ से मैनाक पर्वत का स्पर्श किया और आगे बढ़ा। मैनाक तथा समुद्र ने हनुमान को आशीर्वाद दिया–"तुम्हें अपने कार्य में सफलता प्राप्त हो!" हनुमान मैनाक पर्वत को देखते आसमान में और ऊँचाई तक उड़ा, तब आगे बढ़ चला।

यह सारा दृश्य देखने वाले देवता, महर्षि, सिद्ध तथा देवेन्द्र ने भी मैनाक की प्रशंसा करते हुए मन ही मन सोचा–"मैनाक के आतिथ्य को अस्वीकार करना अकेले हनुमान के लिए ही संभव है! कोई दूसरा अस्वीकार न कर सकता था। यदि अस्वीकार कर भी देता तो उसे उसका फल भोगना पड़ता।"

इस पर इन्द्र ने मैनाक से कहा–"मैनाक, मैं तुम्हारे व्यवहार पर अत्यंत प्रसन्न हूँ। भविष्य में तुम्हें कभी मेरा डर न होगा।" ये बातें सुन मैनाक भी अत्यंत प्रसन्न इसलिए हुआ कि आइंदा उसे इन्द्र का भय न होगा।

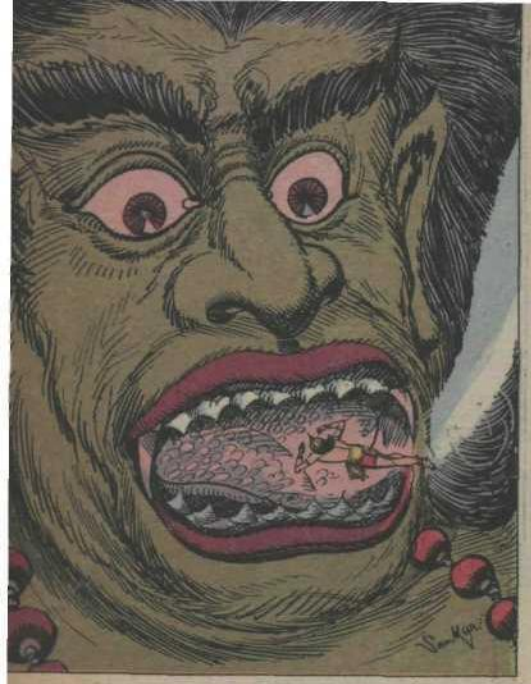

इस बीच हनुमान समुद्र पर बहुत दूर चला गया। उस वक़्त देवता, गंधर्व इत्यादि ने हनुमान के बल की परीक्षा लेनी चाही। वे सर्पों की माता सुरसा के पास जाकर बोले–"हनुमान वायु पुत्र है। वह समुद्र पर उड़ता जा रहा है! तुम पर्वताकृति वाली राक्षसी का रूप धारण कर हनुमान को रोक दो। हम देखना चाहते हैं कि वह तुम्हें जीतकर आगे बढ़ेगा या डर जाएगा।"

सुरसा ने देवताओं की इच्छा को मान कर अत्यंत भयंकर एवं विकृत रूप धारण किया, और हनुमान के मार्ग को रोकते हुए मुंह खोलकर कहा–"हे हनुमान! देवताओं ने तुम को मुझे आहार के रूप में प्रदान किया है। मैं तुम्हें खा जाऊंगी। तुम मेरे मुंह में प्रवेश कर जाओ।"

ये बातें सुन हनुमान प्रसन्नता व्यक्त करते हुए हाथ जोड़कर बोला–"दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मण सीताजी के साथ दण्डकारण्य में पधारे हैं। रामचन्द्रजी की अनुपस्थिति में रावण सीताजी का अपहरण कर उठा ले गया है। मैं उन्हीं रामचन्द्रजी का दूत बनकर सीताजी के पास जा रहा हूँ। इस कार्य में तुम भी मेरी मदद करो। नहीं तो, सीताजी के दर्शन करके श्रीरामचन्द्रजी का कार्य संपन्न कर मैं ही स्वयं तुम्हारे मुंह के भीतर प्रवेश करूँगा। मेरी बातों पर तुम विश्वास करो।"

इस पर सुरसा ने कहा–"मुझे यह वरदान प्राप्त है कि मुझको पार करके कोई आगे बढ़ नहीं सकता। मैं उसे झूठा क्यों साबित करूँ? इसलिए हे हनुमान! मैं तुम्हें निगले बिना छोड़ नहीं सकती!"

सुरसा मुंह खोले हुए थी। उसका मुंह एक विशाल गुफा जैसा था। हनुमान अपने विशाल शरीर को एक इंच परिमाण में संकुचित कर अत्यंत वेग के साथ सुरसा के मुंह के भीतर चला गया, पुनः बाहर

आकर बोला–"हे दक्ष पुत्री! तुम्हें मेरा प्रणाम! मैं तुम्हारे मुंह के अन्दर हो आया हूँ। तुम्हारा वरदान भी व्यर्थ नहीं गया। अब मुझे सीताजी के पास जाने दो।"

सुरसा ने तत्काल अपने राक्षसी रूप को बदलकर निज रूप धारण किया और कहा–"हे हनुमान! तुम कुशल पूर्वक हो आओ! तुम्हारा कार्य सफल होगा! तुम पुनः श्रीरामचन्द्र तथा लक्ष्मण से जा मिलो।"

इस के बाद हनुमान लंका की ओर उड़ते चला गया। आकाश में हनुमान को उड़ते देख सिंहिका नामक राक्षसी ने सोचा–"यह कोई जानवर मेरा आहार बनने आया। मैं इसे खा कर अपनी भूख मिटा लूंगी।" यों सोचकर हनुमान तथा उसकी छाया को पकड़कर राक्षसी ने अपनी ओर खींच लिया।

उस वक़्त हनुमान की हालत ऐसी हो गई जैसे आगे बढ़नेवाले जहाज़ को प्रचण्ड वायु पीछे ढकेल रही हो! हनुमान ने आश्चर्य में आकर चारों तरफ़, ऊपर-नीचे भी देखा। तब उसे समुद्र पर तिरते हुए एक महान जानवर दिखाई दिया। सुग्रीव ने उसे पहले ही बताया था कि समुद्र में अद्‌भुत शक्तिवाला एक जानवर है जो छाया को पकड़कर अपनी ओर खींच लेता

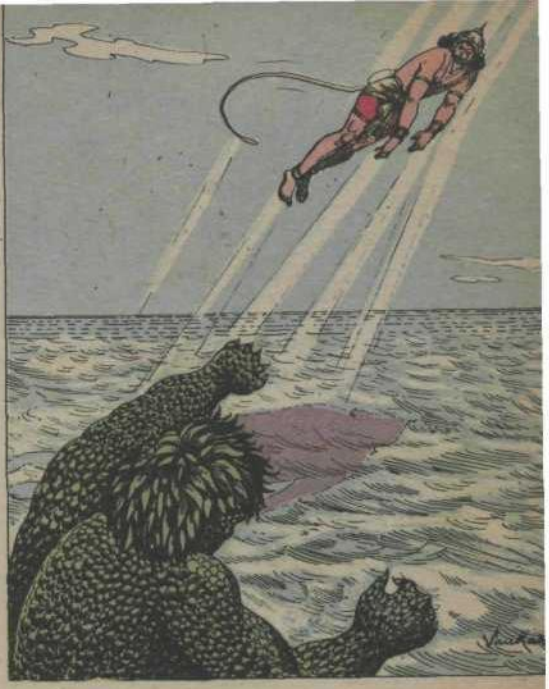

है। हनुमान ने भांप लिया कि यही वह जानवर होगा।

तब हनुमान ने अपनी देह का विस्तार किया। इसे देख सिंहिका ने भी अपने शरीर को बढ़ाया। उसने अपने मुंह को हनुमान के शरीर से भी अधिक विशाल बनाकर खोल दिया और उसे निगलने को हुई। उस वक़्त हनुमान ने सिंहिका के शरीर के भीतर के गुप्त अंगों को देख लिया। फिर क्या था, तत्काल अपने शरीर को सूक्ष्म बनाकर सिंहिका के मुंह के भीतर चला गया। उसके अंगों को फाड़कर उसके मुंह बंद करने के पूर्व ही बाहर चला आया और अपने शरीर को पुनः यथारूप में

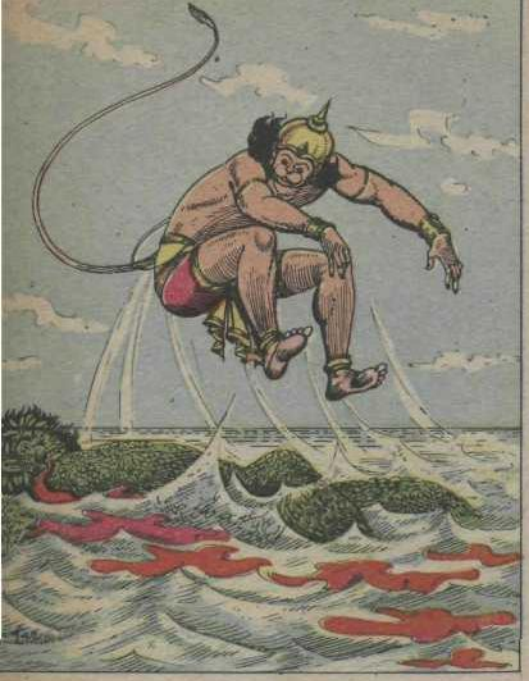

प्रस्तुत किया। सिंहिका का कलेजा टुकड़े टुकड़े हो गया था, जिससे उसका कलेवर समुद्र पर तिरने लगा।

हनुमान ने संतोष की साँस ली। तब पुनः अपनी यात्रा चालू की। अब उसे समुद्र के पार का किनारा तथा दूर पर जंगल दिखाई दिये। लंका द्वीप, मलयपर्वत पर के वन तथा समुद्र में मिलनेवाले नदीमुख भी दिखाई दिये।

हनुमान के मन में एक विचार आया। वह यह कि उसके इस विशाल शरीर तथा वेग को यदि राक्षस देख लेंगे तो उसके कार्य में विघ्न उपस्थित होगा। इसलिए उसने अपने शरीर को अत्यंत छोटा बनाया। वह समुद्र तटीय एक पहाड़ी चोटी पर उतर पड़ा। तब इन्द्र की अमरावती नगर की तुलना कर सकनेवाले लंका नगर को देखा।

लंका नगर त्रिकूट शिखर पर अवस्थित था। हनुमान लंका नगर की ओर बढ़ते हुए फूलों से शोभित घने वृक्षोंवाले पहाड़ी शिखरों तथा उद्यानों को देखने लगा। उसे तरह-तरह के फूलों के वृक्ष, पक्षी, नगरोध्यान, राजोध्यान तथा असंख्य सुंदर दृश्य भी दिखाई दिये। उस रमणीय नगर को देख हनुमान प्रसन्न हो उठा।

लंका नगर के चतुर्दिक कंदक बने थे। उनमें कमल व कुमुद खिले हुए थे। नगर के चारों तरफ़ सोने की चहार दीवारी थी। नगर में प्रवेश करने से रोकने के लिए सशस्त्र राक्षस पहरे पर तैनात थे। अत्यंत ऊँचाई पर निर्मित सफ़ेद भवनों के मध्य मार्ग बने हुए थे। सर्वत्र दुर्ग के बुर्ज-एवं झंड़े थे। त्रिकूट शिखर पर निर्मित होने के कारण लंका नगर ऐसा प्रतीत होता था, मानो आकाश में निर्मित हो। उसका निर्माता विश्वकर्म था।

हनुमान क्रमशः लंका नगर के उत्तरी द्वार पर पहुँचा और रावण के बल का अंदाज़ा लगाने का प्रयत्न किया। वह सोचने लगा! इस महानगर पर विजय

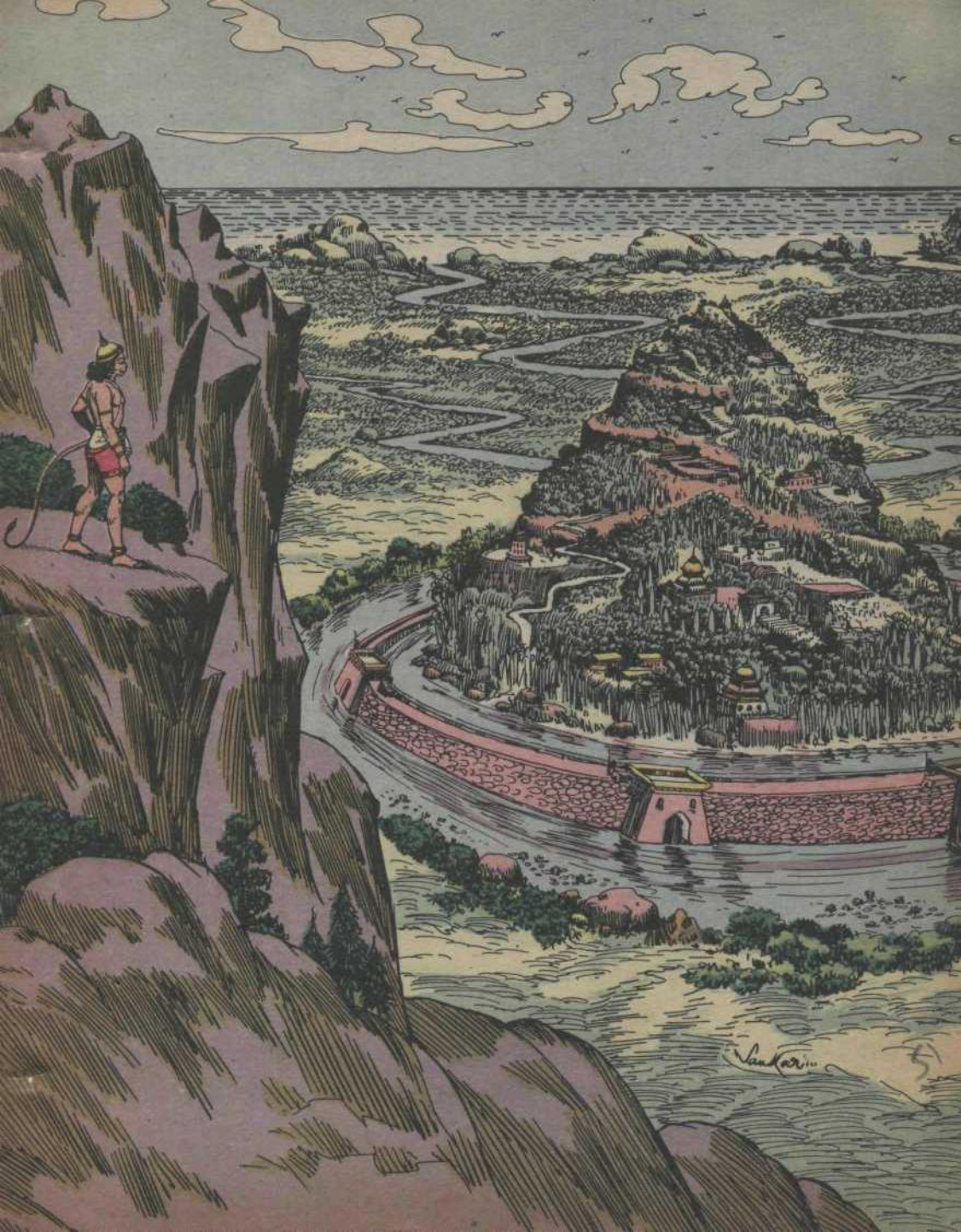

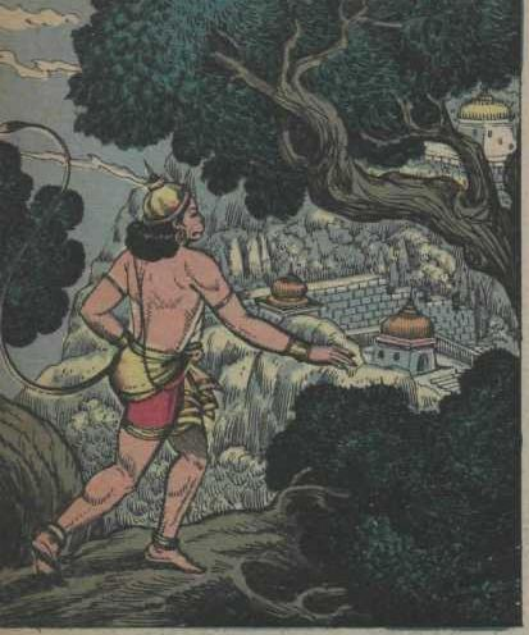

प्राप्त करना किसके लिए संभव है? एक समय यह नगर कुबेर का था। किंतु आज कुबेर भी इस नगर में प्रवेश नहीं कर सकता है। जैसे किसी गुफा पर सर्प पहरा देते हैं, वैसे इस नगर का पहरा अनेक सशस्त्र राक्षस दे रहे हैं। इसके रक्षा-कवच के रूप में अलंघ्य समुद्र है। वानरों का समुद्र को पारकर यहाँ पर आना ही असंभव है। यदि आ भी जावे तो भी कोई प्रयोजन न होगा। क्यों कि देवता भी इस लंका को जीत नहीं सकते। चाहे रामचन्द्रजी जैसे भी पराक्रमशाली क्यों न हो, क्या फ़ायदा? भीतर तक प्रवेश करना दुर्लभ इस लंका नगर में रामचन्द्रजी कर ही क्या सकते हैं? राक्षस स्वभाव से अत्यंत क्रूर होते हैं। सामोपाय द्वारा उन्हें जीतना असंभव है। संपदा के वैभव में डूबे हुए इनके सामने दानोपाय काम न कर सकेगा। बल एवं दर्प रखनेवाले इनके आगे भेदोपाय किसी काम का नहीं है। ये अत्यंत शक्तिशाली हैं, अत: ! युद्ध की भी कोई गुंजाइश नहीं। तिस पर भी समुद्र को पारकर यहाँ तक आने की शक्ति केवल चार ही व्यक्ति रखते हैं–वे हैं–अंगद, नील, सुग्रीव तथा वह स्वयं!

यों विचार में निमग्न हनुमान को लगा कि उसका यों सोचना बेकार है–"ये विचार अब क्यों करूँ? पहले इस बात का पता लगाना है कि सीताजी जीवित हैं या नहीं। यदि जीवित हैं तो उन्हें देखना है। इसके बाद ही अन्य बातों पर विचार करना होगा! मुझे इस तरह हताश नहीं होना चाहिए। दृढ़ संकल्प होने पर कार्य साधन असंभव नहीं है।

उसके सामने प्रथम समस्या थी–लंका नगर में प्रवेश करने की। विशाल शरीर के साथ वह लंका में प्रवेश करेगा तो वह राक्षसों के हाथों में पड़ जाएगा। यदि अत्यंत छोटा शरीर बना ले तो सारे लंका नगर में घूमना कठिन होगा। इसलिए हनुमान ने मध्यम काय बनाकर सारे नगर

में घूमने का निश्चय कर लिया। सीताजी के दर्शन करने के पूर्व उसका राक्षसों के हाथों में पड़ना खतरे से खाली नहीं। यदि बन्दी बना तो राक्षस उसको रावण के सामने उपस्थित करेंगे। रावण दूतों की रक्षा करनेवाला नहीं है।

इस कारण हनुमान सूर्यास्त होने तक इंतज़ार करता रहा, तब अपने शरीर को बिल्ली के परिमाण में छोटा करके देखने में विचित्र लगने लगा। वह साधारण बन्दर की भाँति कूदते-छलांगें मारते लंका नगर के समीप में गया।

नगर की वीथियाँ करीने से बनी थीं, सभी घरों के सुंदर चहार दीवारियाँ बनी थीं। सोने व चाँदी के स्तम्भ थे। सोने के मुलम्मे चढ़ाई गई खिड़कियाँ थीं। सात-आठ मंजिलवाले महल थे। नगर में सर्वत्र स्फटिक एवं मणियों से अलंकार किया गया था। लंका नगर गंधर्व नगर जैसे प्रतीत हो रहा था। हनुमान की समझ में न आया कि भयंकर राक्षसों के पहरे में स्थित उस नगर को वानर कैसे जीत सकेंगे? सीताजी को देखने जाने की प्रसन्नता में वह इस चिंता को बिलकुल भूल बैठा, फिर भी निराश उसे आ घेरती थी।

इतने में चन्द्रोदय हो गया। लंका नामक राक्षसी नारी के रूप में तथा भयंकर

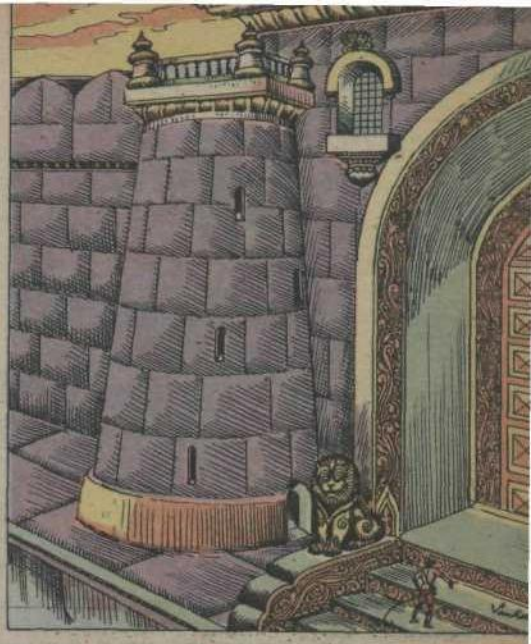

आकृति में हनुमान के सम्मुख प्रत्यक्ष हो पूछ बैठी–"तुम कौन हो? यहाँ पर किसलिए आये हो? तुम जैसे बंदर को इस लंका नगर में प्रवेश करना मना है। बताओ, कहाँ से आये? कैसे आये?"

हनुमान ने जवाब दिया–"तुम जो कुछ जानना चाहती हो, मैं सब बताऊँगा। पर पहले तुम यह तो बताओ कि तुम कौन हो? नगर के प्रवेश द्वार के निकट मुझको रोक कर किसलिए मुझे धमकी दे रही हो?"

"अत्यंत पराक्रमी लंका के राजा रावण की मैं सेविका हूँ। रावण के आदेश पर मैं लंका नगर की रक्षा कर रही हूँ। मुझे जीतकर कोई भी इस नगर में प्रवेश नहीं

कर सकता। मैं तुम्हें अभी मार डालती हूँ। मैं ही लंका हूँ। अब तुम अपना समाचार तो बता दो।" लंका ने कहा।

"मैं लंका नगर देखने के विचार से यहाँ तक चला आया हूँ।" हनुमान ने उत्तर दिया।

"तुम मुझे जीतकर ही लंका नगर को देख सकते हो!" लंका ने कहा।

"मैं नगर को भली भांति देखकर अपने रास्ते चला जाऊँगा। तुम्हारी कोई हानि न करूँगा; मुझ पर विश्वास करो।" हनुमान ने समझाया।

लंका ने भीषण गर्जन कर अपने हाथ से हनुमान को दे मारा। हनुमान भी तीव्र गर्जन करके बायें हाथ की मुट्ठी से लंका पर प्रहार किया। चोट खाकर लंका छटपटाते नीचे गिरकर बोली–"उफ़! मुझको मत मारो। तुम अत्यंत बलवान हो। ब्रह्मा ने एक समय बताया था कि मुझे जिस दिन एक बंदर हरायेगा, उस दिन राक्षसों के लिए खतरा उत्पन्न होगा। अब लगता है कि रावण सीता को उठा लाया जिससे लंका नगर के लिए खतरा उत्पन्न होनेवाला है। तुम जाओ, अपनी इच्छानुसार घूमकर सारा लंका नगर देख लो।"

इसके बाद हनुमान लंका नगर में प्रधान द्वार से न जाकर दुश्मन के अनुरूप चहार दीवारी पर से कूद पड़ा और बायाँ पैर पहले नगर में रखा। जब वह राजमार्ग से होकर जा रहा था तब संगीत की ध्वनियाँ सुनाई दीं। नगर के भवन अत्यंत ऊँचे थे। मणियों तथा पुष्पों से सुसज्जित थे। औरतें मध्यपान कर तीन गतियों में सुंदर ढंग से गा रही थीं। कुछ राक्षसों के घरों से वेद पाठ सुनाई दे रहा था। कुछ राक्षस ज़ोर से चिल्ला रहे थे। प्रधान मार्गों पर जहाँ-तहाँ राक्षस सैनिक एकत्रित थे।

हनुमान ने आत्मविश्वासपूर्वक मन में सोचा–"मैं ने दुर्भेद्य लंका में प्रवेश किया। अब सीताजी के अवश्य दर्शन करूँगा।"

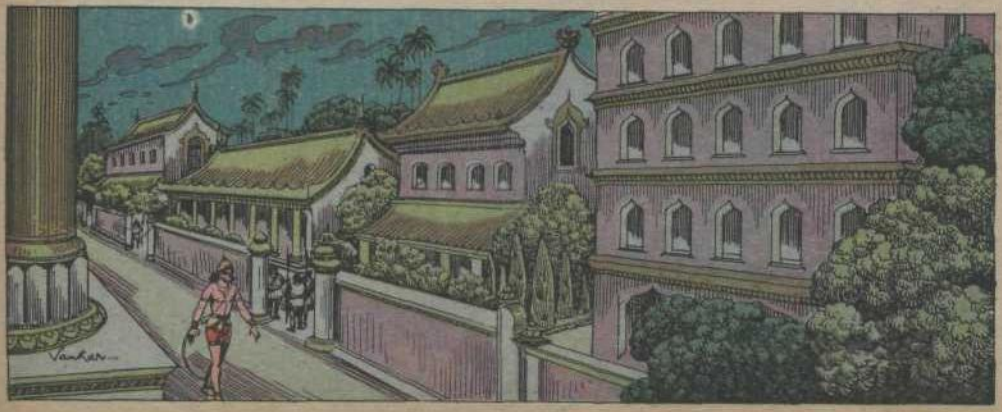

अमर वाणी

यथा कंदुकपातेनो
त्पत्यार्यः पतन्नपि
तथा त्वनार्यः पतति
मृत्पिंडपतनम् यथा ॥ १ ॥

[सत्पुरुष व्यक्ति पतित भी हो जाय तो गेंद की भांति उछल आता है। मगर हीन व्यक्ति गिर जाय तो मिट्टी के ढेले की भांति पड़ा रहता है ।

य दचेतन्योपि पादैः
स्पृष्टः प्रज्वलति सवितु
रिनकांतः, तत्तेजस्वीपुरुषः
परकृतविकृतिः कथम् सहते ? ॥ २ ॥

[सूर्यकांतमणि चेतनारहित होकर भी सूर्य-किरणों के स्पर्श से प्रकाशित होता है। ऐसी हालत में स्वाभिमानी व्यक्ति दूसरों के द्वारा प्राप्त होनेवाले अपमान को कैसे सहन कर सकता है ?]

पादाहतम् यदुत्थाय
मूर्धानं मधिरोहति
स्वस्था देवावमानेपि
देहिन त्वद्वरम् रजः ॥ ३ ॥

[पैरों के नीचे आनेवाली धूल उछल कर सिर पर गिर जाती है। अपमानित होकर भी विचलित न होनेवाले लोगों से वह धूल कहीं उत्तम है।]

पौरुषवानों की रीति

Photo by P. Sundaram

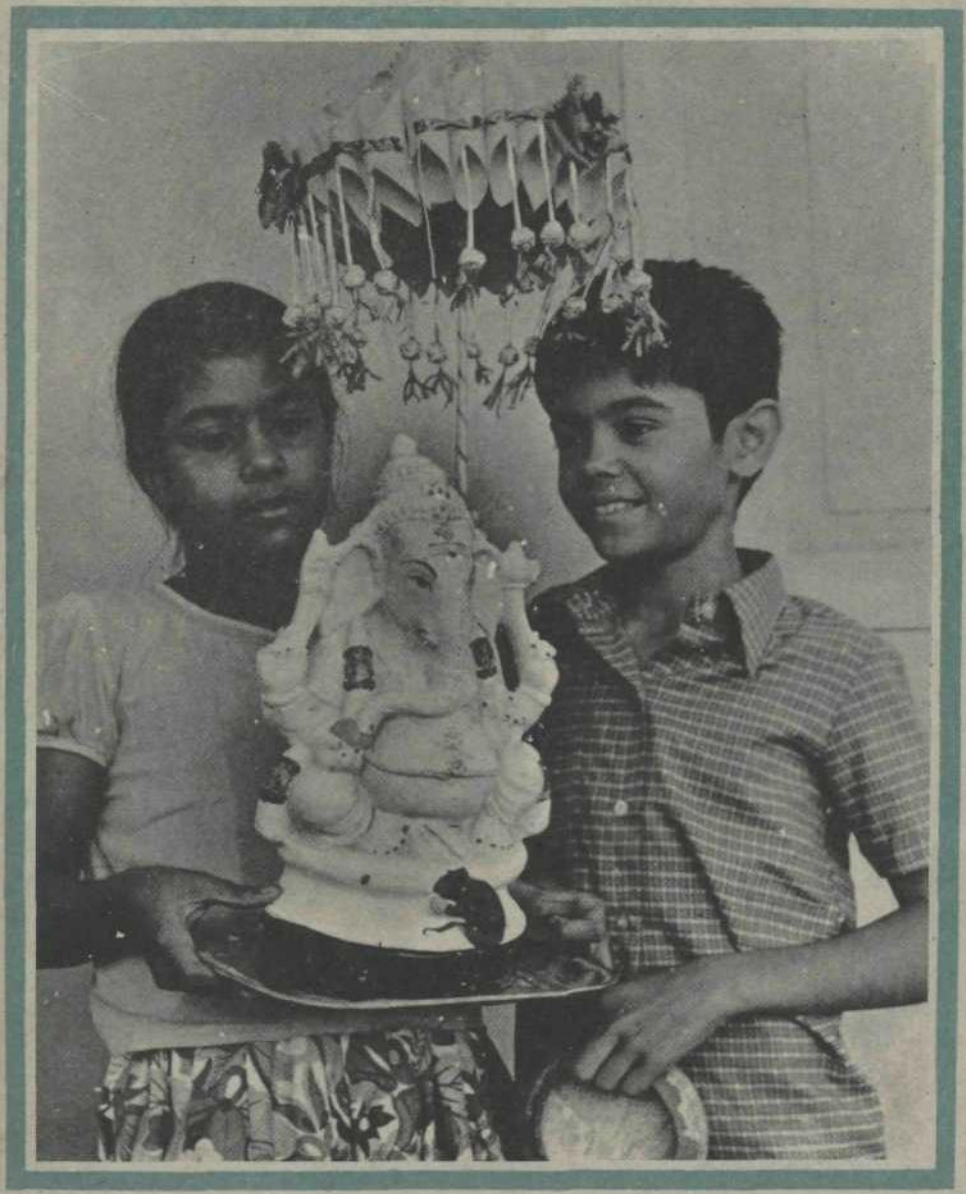

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

गणेशजी को लाये हैं!

प्रेषक:
कु. वर्षामुळे

Photo by S. B. Takalkar

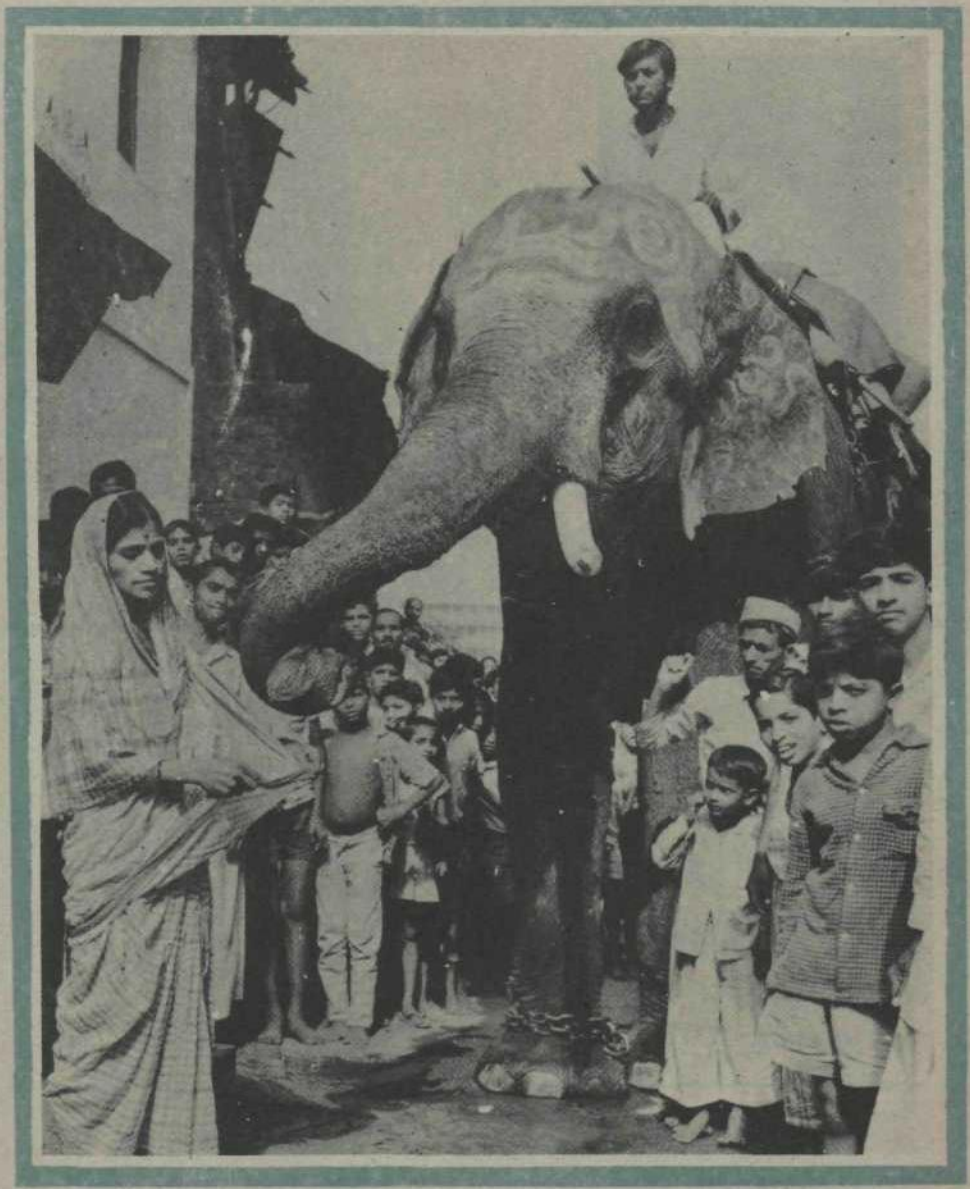

सी. जी. हेच. कॉलनी,
बंबई - ३७

गजेन्द्र भी तो आये हैं!!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ सितम्बर १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ नवम्बर के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

मित्र-भेद	...	२	दान-पत्र	...	३१
विचित्र जुड़वाँ	...	५	दो डाकू	...	३६
उत्तम दान	...	१३	ज्ञानोदय	...	४०
जब आँखें खुलीं	...	१७	अकाल की दर	...	४३
शादी की दावत	...	२१	वीर हनुमान	...	४५
राज्य का बंटवारा	...	२६	अमर वाणी	...	५३

दूसरा आवरण पृष्ठ:
सूरजमुखी

तीसरा आवरण पृष्ठ:
गुलशबो

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

बच्चों की तन्दुरुस्ती के लिये

डाबर ग्राइप वाटर पिलाएँ

ये रही स्कॉलर

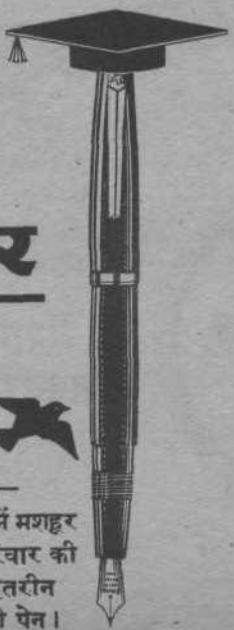

विद्यार्थियों के लिए सर्वोत्तम पेन ब्लॅकबर्ड द्वारा निर्मित

अब, ब्लॅकबर्ड विद्यार्थियों के लिए खास पेन, 'स्कॉलर' तैयार करता है। यह हलकी, आकर्षक और सुडौल है जिससे यह आसानी से पकड़ी जा सकती है—और स्याही के लगातार सहज बहाव के लिए इस में बारीक इरिडियम टिप्ड निब लगी हुई है। इसे एक बार देखिए। आजमाइए। आप कह उठेंगे 'वाह! वाह! पेन हो तो ऐसी हो'!

स्कॉलर पेन—
दुनिया भर में मशहूर
ब्लॅकबर्ड परिवार की
एक और बेहतरीन
क्वालिटी की पेन।

heros' SI-132 C HIN

59

ये लीजिये आपको लुभानेवाले

क्रॅकीज़

सांता क्लॉस की ही तरह एन. पी. भी बच्चोंके लिए स्वादिष्ट मिठाइयोंका खज़ाना लुटाने लाते हैं। एन. पी. क्रॅकीज़ च्युइंग गम—बबल गम भी—जो पेपरमिंट, पाइनएपल, ट्टी फ्रूटी, ऑरेंज और अनोखे, सुपारीके स्वादयुक्त होते हैं।

इसके अलावा बॉनबाइट—जो मलाईदार और अप्रतिम स्वादिष्ट मिठाई है, और फलोंके रुचिकर स्वादवाले बालगम्स।

आपकी रुचि-पसंद च्युइंग गम

(NP)—151 गुणवत्ता के निशानवाले अद्वितीय च्युइंग गम्स और बबल गम्स।

अपनी जेबोंमें हमेशा (NP)–आपकी पसंद की च्युइंग गम्स रखिए।

दि नॅशनल प्रॉडक्टस
बंगलूर

Dattaram-NP-1 HINDI

Photo by: M. NATARAJAN

LILIES

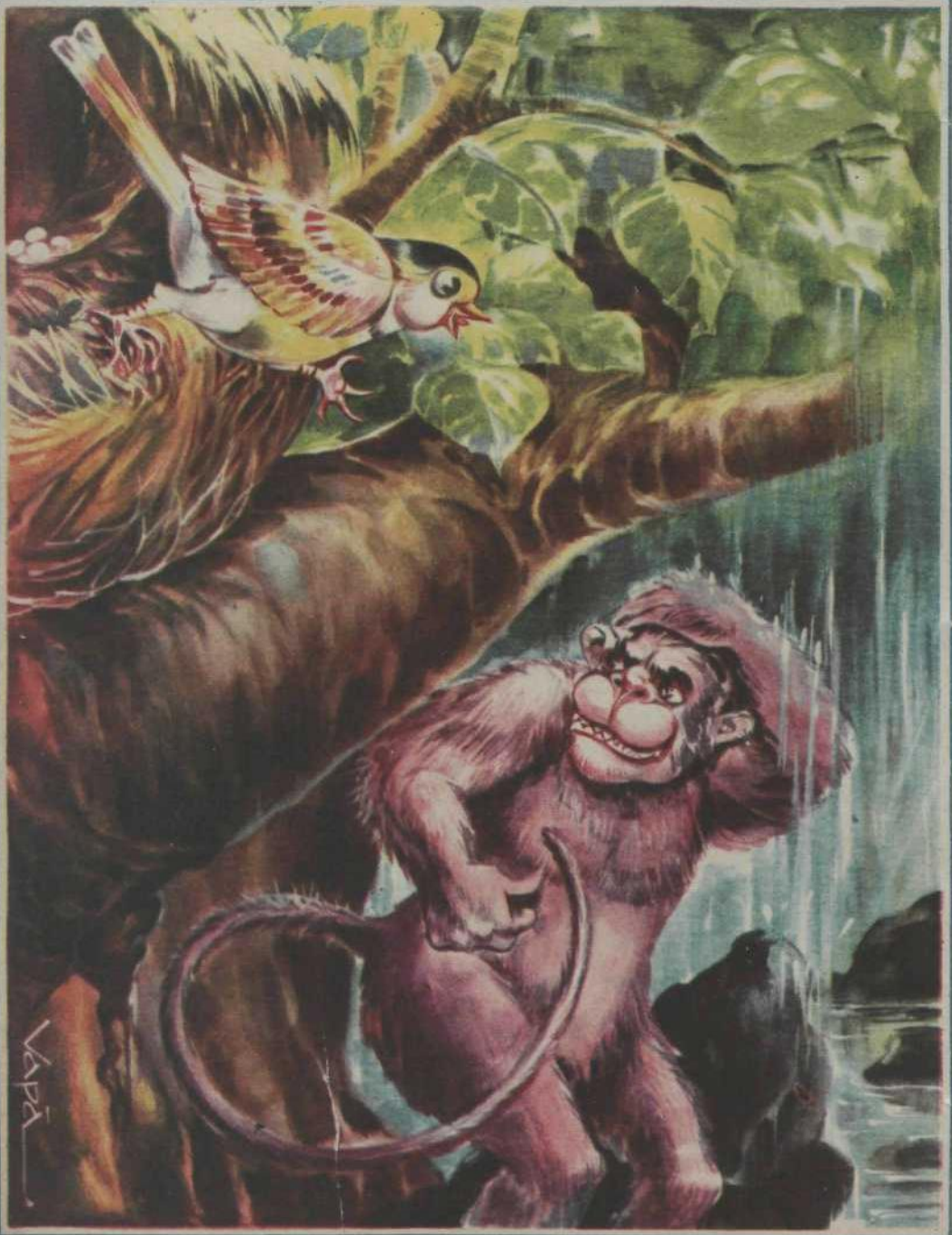

मित्र-भेद